प्रकाशक :
श्री दादू संत साहित्य मण्डल
स्वामी लक्ष्मीरामचिकित्सालय
जयपुर

सेवार्पण १२ रु०

महाशिवरात्री
सं० २०३८

मुद्रक :
अजन्ता प्रिन्टर्स
जयपुर

प्राक्कथन

यह परमपिता परमेश्वर की ही परमानुकम्पा है कि श्रीदादू-सत्साहित्य मण्डल सन्तसाहित्य प्रेमियो की सेवा मे यह "सुन्दर विलास" का प्रकाशन प्रस्तुत कर रहा है। जैसाकि श्री दादूसाहित्य मण्डल का सकल्प है कि वह यथासम्भव प्रतिवर्ष ही कोई न कोई छोटा-मोटा प्रकाशन कर सन्तसाहित्य की सेवा करता रहे, गत वर्ष श्री दादू नित्यपाठरत्नावली का प्रकाशन प्रस्तुत किया था। इस वर्ष यह दूसरे प्रकाशन का प्रस्तुतीकरण है।

सुन्दरविलास श्री स्वामी सुन्दरदास जी महाराज की अनुपम सुन्दर ग्रथावली का ही एक अमूल्य हीरा है। यह ग्रन्थ वहुत समय से दुर्लभ हो रहा था और बरावर इसकी माग हो रही थी। उसीकी पूर्ति के लिए सत्साहित्य मण्डल का यह छोटा सा प्रयास है।

सुन्दरविलास वास्तव मे ही "सत्य शिव सुन्दरम्" का सुन्दरतम विलास है। यह इतना सर्वाङ्गसुन्दर है कि इसका एक एक अङ्ग गुलाब के फूल के समान है जिसकी पखुडी पखुडी मे फडकती हुई मगलकारी कविता का सुन्दर रग और ज्ञान-भक्ति-वैराग्य की मोहक सुगन्ध भरी है।

"सुन्दर सद्गुरु है सही सुन्दर शिक्षा दीन्ह।
सुन्दर वचन सुनाय के सुन्दर सुन्दर कीन्ह॥"

स्वय सुन्दरदास जी के इन भावविभोर उद्गारो के अनुसार उनकी बाल्यावस्था मे ही उनके परमगुरुदेव श्री स्वामी दादूदयालजी महाराज ने परमवात्सल्य के साथ उनको सुन्दर नाम देकर सुन्दरतम जीवन की जो दीक्षा दी थी उसीकी दिव्य छटा सुन्दरविलास के पद पद मे छलकती है। सुन्दरविलास का एक एक शब्द एक अज्ञात सौन्दर्यसागर मे डुबकी लगाने की प्रेरणा देता है। यह सुन्दरवाणी किसी तडफती मछली को किसी जल की, किसी चातक को किसी स्वाति बूद की, किसी चकोर को किसी चन्द्रमा की किसी सर्प को किसी चदन तरु की दिशा दिखाने के लिए पर्याप्त है।

सुन्दरविलास का यह प्रकाशन सुन्दरदास जी महाराज की ही पावन सेवा मे एक पुष्पार्पण है। इस सर्वसुन्दर ग्रन्थ के प्रकाशन मे हमारी असावधानी के कारण जो असुन्दरता आ गयी हो उसके लिए हम श्री सुन्दरदासजी महाराज से क्षमाप्रार्थी हैं।

"सुन्दरदास पुकारि के कहत बजावे ढोल।
चेति सके न चेति ले हरि बोलो हरि बोल ॥
सुन्दर देखा सोधि के सब काहू का ज्ञान।
कोई मन माने नही विना निरंजन ध्यान ॥"

॥ हरि ओ३म् तत्सत् ॥

कार्यालय	मन्त्री
स्वामी लक्ष्मीराम	श्रीदादू सत्साहित्य
चिकित्सालय	मण्डल
जयपुर	जयपुर

विषय सूची

निर्द्वन्द्वो निरहङ्कार· निर्वैरः सर्वजन्तुपु ।
ब्रह्मनिष्ठो महात्मा श्रीदादूर्विजयतेराम् ।।
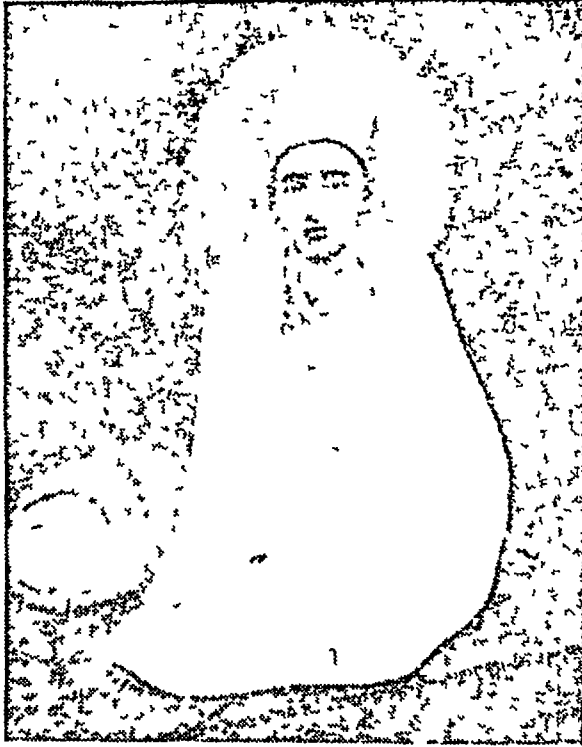
वीतरागभयक्रोधलोभमोहमदभ्रम ।
सत्यधर्मपर श्रीमान् दादूर्विजयतेतराम् ।।
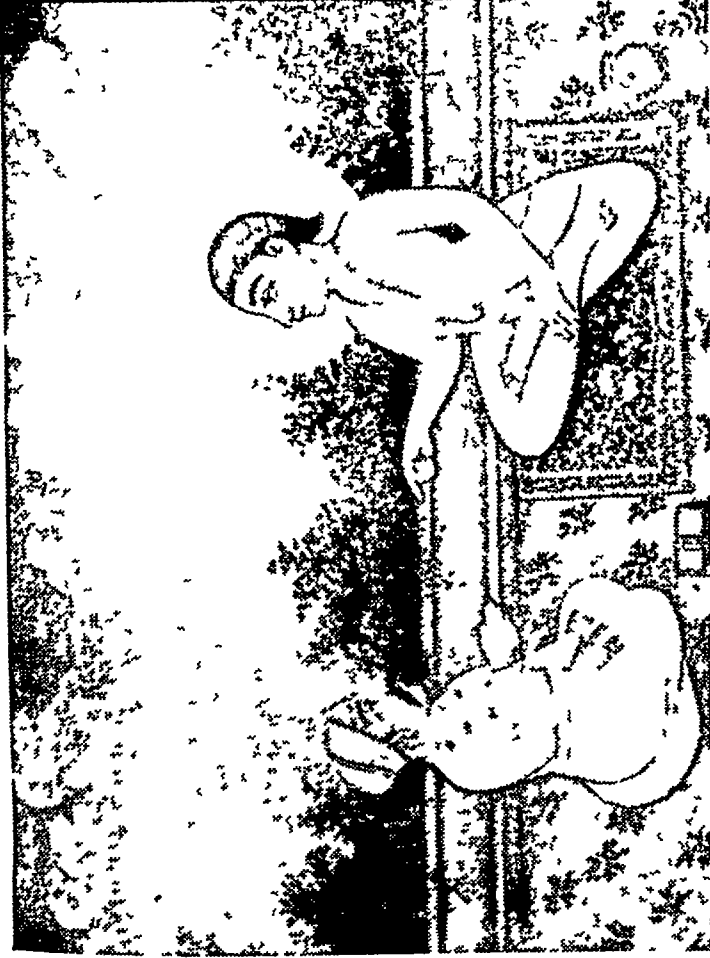
स्वामी सुन्दरदासो जयतितरा ज्ञानिना श्रेष्ठ

॥ श्री परमात्मने नम ॥

अथ श्री स्वामी सुन्दरदासजी महाराज कृत

सवैया ग्रंथ

श्री सुंदर विलास

प्रारम्भ

। अथ गुरुदेव को अंग ॥१॥

इन्दव छन्द ।

मौज करी गुरुदेव दया करि,
शब्द सुनाइ कह्यो हरि नेरो।
ज्यौं रवि के प्रगटे निशि जातसु,
दूरि कियो भ्रम भांन अंधेरो ॥
कायिक वाचिक मानस हू करि,
है गुरुदेव हि वदन मेरो ।
सुन्दरदास कहै कर जोरि जु,
दादूदयालु को हू नित चेरो ॥१॥

---

(१) मौज करी-आनन्द कर दिया। शब्द सुनाइ-ानोपदेश देकर। कह्यो हरि नेरो-हृदय मे ही भगवान के र्शन करा दिये। भ्रमभान अंधेरो-भ्रमज्ञान का अंधेरा। ायिक-शरीर से। वाचिक-वाणी से। मानस-मन से। र जोरि-हाथ जोड़कर। चेरो-सेवक।

पूरन ब्रह्म विचार निरंतर,
काम न क्रोध न लोभ न मोहै ।
श्रोत्र त्वचा रसना अरु घ्राण सु,
देखि कछू कहु नैन न मोहै ॥
ज्ञान स्वरूप अरूप निरूपम,
जासु गिरा सुनि मोहन मोहै ।
सुन्दरदास कहै कर जोरि जु,
दादूदयालु हि मोर नमो है ॥२।

धीरजवंत अडिग्ग जितेन्द्रिय,
निर्मल ज्ञाँन गह्यौ दृढ आदू ।
शील संतोष क्षमा जिनके घट,
लागि रह्यो सु अनाहद नादू ॥
भेष न पक्ष निरंतर लक्ष्यजु,
और नहीं कछु वाद विवादू ।

(२) पूरण-पूर्ण, सर्वव्यापक । निरंतर-सदा, अ या अव्यवहित, यथा (दादू निरंतर पीव पाइया) । वाणी, उपदेश ।

(३) निर्मल-निर्दोप, भ्रमसशयादि दोपरहि दृढ-अविचल-निश्चयात्मक । निरंतर-निष्पक्षभाव । हृदय मे । अनाहदनादू-अनाहत नाद, स्वत उद् सोऽहम् ध्वनि ।

ये सब लक्षण हैं जिन माहि सो,
सुन्दर के उर हैं गुरु दादू ॥३॥

भौजल में वहि जातहुते जिन,
काढि लिये अपने करि आदू ।
और संदेह मिटाइ दिये सब,
कानिनि टेर सुनाइ कै नादू ॥
पूरण ब्रह्म प्रकास कियौ पुनि,
छूटि गये सब वाद विवादू ।
ऐसी कृपा जु करी हम ऊपरि
सुन्दर के उर है गुरु दादू ॥४॥

कोउक गोरख कौ गुरु थापत,
कोउक दत्त दिगंवर आदू ।
कोउक कंथर कोउ भरत्थर,
कोउ कबीर कौ राषत नादू ॥
कोउ कहै हरदास हमारे जु,
यौं करि ठानत वाद विवादू ।
और तो संत सबै सिर ऊपरि,
सुन्दर के उर है गुरु दादू ॥५॥

---

(४) भौजल-भवजल, संसारसागर। काननि टेर सुनाई-गुरुमंत्र देकर। (५) दत्त--दत्तात्रेय। भरत्थर-भार्तृहरि।

कोउ विभूति जटा नष धारि,
कहै यह भेष हमारौ ही आदू ।
कोउक कान फराइ फिरे पुनि,
कोउक सींगि बजावत नादू ॥
कोउक केश लुचाई करे व्रत,
कोउक जगम कै शिव वादू ।
ये सब भूलि परे जित ही तित,
सुन्दर के उर है गुरु दादू ॥६॥

जोगी कहैं गुरु जैंन कहैं गुरु,
बौध कहैं गुरु जगम मानै ।
भक्त कहैं गुरु न्यासी कहै,
बनवासी कहै गुरु और बषानै ॥
सेख कहै गुरु सोफी कहै गुरु,
याही तें सुन्दर होत हैरानै ।
वाहु कहैं गुरु वाहु कहैं गुरु,
है गुरु सोई सबै भ्रम भानै ॥७॥

सो गुरुदेव लिपै न छिपै कछु,
सत्व रजो तम ताप निवारी ।
इन्द्रिय देह मृषा करि जानत,
शीतलता समता उर धारी ॥

---

(७) मृषा-असत्य, क्षणिक विनाशी । शीतलता-शान्ति । द्वैत उपाधि-भेदभाव ।

व्यापक ब्रह्म विचार अखंडित,
द्वैत उपाधि सबै जिन टारी ।
शब्द सुनाइ संदेह मिटावत,
सुन्दर वा गुरु की बलिहारी ॥८॥

पूरण ब्रह्म बताइ दियौ जिन,
एक अखंडित व्यापक सारैं ।
राग रु द्वेष करैं अब कौन सौं,
जोई है मूल सोई सब डारैं ॥
संशय शौक मिट्यौ मन कौ सब,
तत्त्व विचार कह्यौ निरधारैं ।
सुन्दर शुद्ध किये मल धोइ सु,
है गुरु को उर ध्यान हमारैं ॥९॥

ज्यौं कपरा दरजी गहि ब्यौंतत,
काष्ठ हि कौं बढई कसि आनैं ।
कंचन कौ जु सुनार कसै पुनि,
लोह कौ घाट लुहार ही जानैं ॥
पाहन कौं कसि लेत सिलावट,
पात्र कुम्हार कै हाथ निपांनैं ।
तैसैं ही शिष्य कसै गुरुदेव जु,
सुन्दरदास तबै मन मानैं ॥१०॥

---

(९) निरधारे-निश्चित । (१०) घाट-घडना । पाहन-पषाण, पत्थर । सिलावट-मूर्तिकार । निपाने-बनता है ।

मनहर छंद ।

शत्रु है न मित्र कोऊ जाकै सब है समांन,
　देह कौ ममत्व छाडि आतमा ही राम है ।
और हू उपाधि जाकै कबहूँ न देषियत,
　सुख के समुद्र मे रहत आठो जाम है ।।
रिद्धि अरु सिद्धि जाकै हाथ जौरि आगै खरी,
　सन्दर कहत ताकै सब ही गुलाम हैं ।
अधिक प्रशसा हम कसै करि कहि सकै,
　ऐसै गुरुदेवकौ हमारी जु प्रणांम है ।।११।।

ज्ञांन कौ प्रकास जाकै अन्धकार भयौ नास,
　देह अभिमान जिन तज्यौ जानि सारधी ।
सोई सखसागर उजागर बैरागर ज्यौ,
　जाकै बैन सुनत बिलात है बिकारधी ।।
अगम अगाध अति कौऊ नहि जानै गति,
　आतमा कौ अनुभव अधिक अपारधी ।
ऐसौ गुरुदेव वदनीक तिहुँ लोक माहि,
　सुन्दर विराजमान शोभत उदारधी ।।१२।।

---

(११) ममत्व-ममता, आसक्ति । उपाधि-लागलपेट । आठों जाम-आठो पहर । (१२) सारधी-सारतत्व । बैन-वचन उपदेश । विकार धी-विकृत विचार । बिलात है-नष्ट हो जाते हैं । वदनीक-वदनीय । बैरागर-हीरा

काहू सौं न रोष तोप काहू सौं न राग दोष,
काहू सौ न वैरभाव काहू की न घात है ।
काहू सो न वकवाद काहू सो नही विषाद
काहू सौ न सग न तौ कोऊ पक्षपात है ॥
काहू सौं न दुष्ट वैन काहू सौ न लैन दन,
ब्रह्म कौ विचार कछु और न सुहात है ।
सुन्दर कहत सोई ईशनि को महा ईश,
सोई गुरुदेव जाकै दूसरी न वात है ॥१३॥

लोह कौ ज्यौं पारस पखान हू पलटि लेत,
कचन छुवत होइ जग मे प्रमानिये ।
द्रुम कौ ज्यौं चदन हू पलटि लगाइ वास,
आपु कै समान ता मे शीतलता आनिये ॥
कीट को ज्यौं भृङ्ग हू पलटि कै करत भृङ्ग,
सोई उडि जाइ ताको अचिरज मानिये ।
सुन्दर कहत यह सगर प्रसिद्ध बात,
सद्य शिष्य पलटै सु सत्यगुरु जानिये ॥१४॥

गुरु विन ज्ञान नाहि गुरु बिन ध्यान नाहि,
गुरु विन आतम-विचार न लहतु है ।

---

(१४) पारस पखान-पारसमणि । द्रुम-साधारण वृक्ष । भृङ्ग-भौंरा । सद्य तत्काल । पलटै-जीव से शिव बनादे ।

गुरु विन प्रेम नाहि गुरु विन प्रीति नाहि,
　　गुरु विन शील हु सन्तोष न गहतु है ॥
गुरु विन प्यास नाहि बुधि को प्रकाश नाहि,
　　भ्रम हू को नाश नाहि संशय रहतु है।
गुरु विन बाट नाहि कौड़ा विन हाट नाहि,
　　सुन्दर प्रगट लोक वेद यों कहतु है ॥१५॥
पढ़े के न बैठे पास अखिर न वाचि सकै,
　　विन ही पढ़े तें कैसे आवत है फारसी।
जौहरी के मिलै विन परख न जानै कोइ,
　　हाथ नग लिये फिरै संशै नहिं टारसी ॥
बैंद हू मिल्यौ न कोऊ बूटी की बताइ देत,
　　भेद विनु पाये वाकै औषध है छारसी।
सुन्दर कहत मुख रंच हू न देख्यो जाइ,
　　गुरु विन ज्ञान ज्यौं अंधेरे माहि आरसी ॥१६॥
गुरु के प्रसाद बुधि उत्तम दशा कों ग्रहै,
　　गुरु के प्रसाद भव दुख विसराइये।
गुरु के प्रसाद प्रेम प्रीति हू अधिक बढ़ै,
　　गुरु के प्रसाद राम नाम गुन गाइये ॥
गुरु के प्रसाद सब जोग की जुगति जानै,

---

(१५) प्यास आत्मजिज्ञासा। कोडा-धन (१६) बैंद-वैद्य, औषध विशेषज्ञ। छार सी-राख के बराबर।

गुरु के प्रसाद सून्य मैं समाधि लाइये ।
सुन्दर कहत गुरुदेव जौ कृपालु होंहि,
तिनकै प्रसाद तत्व ज्ञान पुनि पाइये ॥१७॥
बूडत भौ सागर मैं आइकै बचावैं धीर,
पारकै लगाइ देत नाव कौ ज्यौं खेवगौ ।
पर उपकारी सब जीवनि के तारैं काज,
कबहू न आवै जाके गुननि कौ छेव सौ ॥
वचन सुनाइ भय भ्रम सब दूरि करै,
सुन्दर दिपाइ देत अलप अभेव सौ ।
और हू सनेही हम नीकैं करि देषे सोधि,
जग मैं न कोऊ हितकारी गुरदेव सौ ॥१८॥
गुरु तात गुरु मात गुरु बंधु निज गात,
गुरुदेव नख सिख सकल सवार्यो है ।
गुरु दिये दिव्य नैंन गुरु दिये मुख बैंन,
गुरुदेव श्रवन दे सब्द हू उचार्यो है ॥
गुरु दिये हाथ पाव गुरु दियो सीस भाव,

---

(१७) प्रसाद-कृपा । उत्तम दसा-शुद्ध अवस्था । भवदुख-संसार के दुःख । शून्य मे-निरंजन निराकार ब्रह्म मे । (१८) बूडत-डूबते हुओ को । भौ-भव । खेवसो-खेने वाला । छेवै-पार । सोधि-परीक्षा करके ।

गुरुदेव पिंड माहि प्राण आइ डार्‌यो है ।
सुन्दर कहत गुरुदेव जू कृपालु होइ,
फेरि घाट घरि करि मोहि निसतार्‌यो है ।।१६।।
कोऊ देत पुत्र धन कोऊ दल बल धन,
कोऊ देत राज साज देव रिषि मुन्यौ है ।
कोऊ देत जस मान कोऊ देत रस आन,
कोऊ देत विद्या ज्ञान जगत मे गुन्यो है ।।
कोऊ देत रिधि सिधि कोऊ देत नव निधि,
कोऊ देत और कछु तातै शीस धुन्यौ है ।
सुन्दर कहत एक दियौ जिन राम नाम,
गुरु सौ उदार कोऊ देख्यो हैं न सुन्यौ है ।।२०।।
भूमि हू की रेणु की तौ सख्या कोऊ कहत है,
भार हू अठारा द्रुम तिनके जो पात है ।
मेघन की सख्या सोऊ रिषिन कही विचार,
बूदन की सख्या तेऊ आइकै बिलात है ।।
तारन की सख्या सोऊ कही है पुरान माहि,
रोमन की सख्या पुनि जितनेक गात है ।
सुन्दर जहा लौ जत सवही को आवै अत,
गुरु के अनत गुन कापै कहे जात है ।।२१।।

---

(१६) गात-शरीर । (२१) रेणु-धल के कण । जन्त-जन्तु, जीव ।

गोविद के कीये जीव जात है रसताल कौ,
  गुरु उपदेशे सो तो छूटे जम फद त ।
गोविद के कीये जीव बस परे कर्मन के,
  गुरु के निवाजे सो फिरत है स्वछद तें ।।
गोविद के कीये जीव बूडत भौसागर मे,
  सुन्दर कहत गुरु काढे दुख द्वद तें ।
ग्रोर हू कहा लौ कछु मुख तें कहै वनाइ,
  गुरु की तौ महिमा ग्रधिक है गोविद तें ।।२२।।

चितामनि पारस कलपतरु कामधेनु,
  ग्रौर हू ग्रनेक निधि वारि वारि नाषिये ।
जोई कछु देषिये सो सकल विनाशवत,
  वुधि मे विचार करि वहु ग्रभिलाषिये ।।
तातें ग्रब मन वच क्रम करि कर जोरि,
  सुन्दर कहत सीस मेलि दीन भाषिये ।
वहुत प्रकार तीनो लोक सव मोधे हम,
  ऐसी कौन भेट गुरुदेव ग्रागे राखिए ।।२३।।

महादेव वामदेव रिषभ कपिलदेव,
  व्यासदेव शुक हू जैदेव नामदेव जू ।
रामानन्द सुखानन्द कबिर ग्रनन्तानद,

(२२) रसातल-पाताल लोक । जमफद-जम की फांसी ।
(२३) मन वच क्रम-मन वाणी कर्म । मोधे-ढूढ लिए ।

सुरेसुरानद हू कै आनद अछेव जू ॥
रैदास कबीरदास मोझादास पीपादास,
धनादास हू कै दासभाव ही की टेव जू ।
सुन्दर सकल सत प्रगट जगत माँहि,
तै सै गुरु दादूदेव लागे हरि सेव जू ॥२४॥
गुरुदेव सर्वोपरि अधिक विराजमान,
गुरुदेव सब ही तै अधिक गरिष्ठ है ।
गुरुदेव दत्तात्रेय नारद शुकादि मुनि,
गुरुदेव ज्ञानघन प्रगट वसिष्ठ हैं ॥
गुरुदेव परम आनदमय देखियत,
गुरुदेव वर वरीयान हू वरिष्ठ है ।
सुन्दर कहत कछु महिमा कही न जाइ,
ऐसे गुरुदेव दादू मेरे सिर इष्ट है ॥२५॥
जोगी जैन जगम सन्यासी वनवासी बौध,
और कोऊ भेष पक्ष सब भ्रम भान्यौ है ।
तापस रिषीसुर मुनीसुर कवीसुर ऊ,
सबन को मत देखि तत पहिचान्यो है ॥
वेदसार तन्त्रसार स्मृति रु पुरान सार,
ग्रन्थन को सार सोई हृदे माँहि आन्यो है,

---

(२५) गरिष्ठ-महान् । वरिष्ठ-श्रेष्ठ । इष्ट-आराध्य देव । सिर-सर्वोपरि ।

सुन्दर कहत कछु महिमा कही न जाइ,
ऐसे गुरुदेव दादू मेरे मन मान्यो है ॥२६॥
जीते हैं जु काम क्रोध लोभ मोह दूरि किए,
और सब गुनन को मद जिन भान्यो है ।
उपजै न ताप कोऊ शीतल सुभाव जाको,
सबही में समता सन्तोष उर आन्यो है ॥
काहू सों न राग दोष देत सबही को पोष,
जीवत ही पायो मोक्ष एक ब्रह्म जान्यो है ।
सुन्दर कहत कछु महिमा कही न जाइ,
ऐसो गुरुदेव दादू मेरे मन मान्यो है ॥२७॥

॥ इति श्री गुरुदेव को अंग सम्पूर्ण ॥

---

(२६) तत-तत्त्व । रिषीसुर-ऋषीश्वर । मुनीसुर-मुनीश्वर । कवीसुर-कवीश्वर ।

(२७) भान्यो है-दूर कर दिया । दोष-द्वेष । मोक्ष । पोष-पोषण ।

अथ उपदेश चितावनी को अंग ।।२।।

हंसाल छंद

तो सही चतुर तू जान परवीन अति,
परै जनि पिंजरै मोह कूवा ।
पाइ उत्तम जनम लाइ लै चपल मन,
गाइ गोविंद गुन जीति जूवा ।।
आपु ही आपु अज्ञान नलनी बध्यौ,
बिना प्रभु विमुख कै बार मूवा ।
दास सुन्दर कहै परम पद तौ लहै,
राम हरि राम हरि बोल सूवा ।।१।।

नफ्स शतान कौं आपुनी कैद करि,
क्या दुनी मै पर्‌या खाइ गोता ।
है गुनहगार भी गुनह ही करत है,
खाइगा मार तब फिरै रोता ।।
जिन तुझै खाक सौं अजब पैदा किया,
तू उस्से क्यौं फरामोस होता ।
दास सुन्दर कहै सरम तब ही रहै,
हक्क तू हक्क तू बोल तोता ।।२।।

---

(१) परवीन-प्रवीण । अज्ञान नलनी-अज्ञानकी नाली, जैसा कि तोता नाली के द्वारा पकडा जाता है ।

(२) नफ्स मन । उस्से-उसमे । फरामोस-विमुख ।

आब की बूंद औजूद पैदा किया,
    नैन मुख नासिका करि सजूती ।
ख्याल ऐसा करै इसी सौं फिरै,
    आगि के दीप क्या करै सूती ॥
भूलि उस खसम कौं काम में क्या किया,
    बेगिनै यादि करि गहि निगूती ।
दास सुन्दर कहै सबै सुन तौ कहै
    भी तुही भी तुही बोल तूती ॥३॥
अवल उस्ताद के कदम की खाक हो,
    हिर्स दुरजान सब छाडि फैना ।
यार दिलदार दिल माहि तू याद कर,
    है तुझी पास तू देखि नैना ॥
जान का जान है, जिंद का जिंद है,
    सपुन का सपुन कछु समझि सैना ।
दास सुन्दर कहै सकल घट में रहै,
    एक तू एक तू बोलि मैना ॥४॥

मनहर छन्द

कान के गए तें कहा कान ऐसी होत मूढ,
    नैन के गये तै कहा नैन ऐसै पाइ है ।

---

(३) आब-पानी । औजूद-अद्भुत शरीर । करि सजूती-लगाकर । ख्याल-विचार । खसम-स्वामी परमेश्वर ।

नासिका गये तै कहा नासिका सुगन्ध लेत,
मुख के गये तै कहा मुख ऐसै गाइ है ।।
हाथ के गये तै कहा हाथ ऐसौ काम होत,
पाव के गये तै ऐसै पाव कत धाइ है ।
याहि तै बिचारि देषि सुन्दर कहत तोहि,
देह के गये तै ऐसी देह नही आई है ।।५।।

बार बार कह्यौ तोहि सावधान क्यौ न होहि,
ममता की पोट सिर काहे कौं धरतु है ।
मेरो धन मेरो धाम मेरे सुत मेरी बाम,
मेरो पशु मेरो ग्राम भूलौ यौ फिरतु है ।।
तौ भयौ बावरौ बिकाइ गई बुद्धि तेरी,
ऐसौ अन्धकूप गृह तामै तू परतु है ।
सुन्दर कहत तोहि नैक हू न आवै लाज,
काज कौ बिगारि कै अकाज क्यौ करतु है ।।६।।

---

(४) अबल उस्ताद-आदि जगद्गुरु । कदम की षाक-पैरो की धूल । हिरस वुगुजार-कामना छोड । फैना-छल कपट । जान का जान-प्रणो का प्राण । जिंद का जिंद-जीवन का जीवन । सखुन का सखुन-सब सारो सार ।

(६) वाम-वामागना, स्त्री । नेक-थोडी सी भी । काज-कार्य । अकाज-अकार्य ।

जैसे कोऊ कुपेच परयौ गाठि अति घुरि गई,
ब्रह्मा आइ छोरै ऐसौ ही न छूटत न कबहू ।
तेल सौं भिजोइ करि [illegible] लपेटि राखै,
कूकर की पूछ सूधी होइ नही तबहू ॥
मानु देत सीष बहु कौरी करि गिनत जाइ,
कहत कहत दिन बीत गयो सबहू ।
सुन्दर अज्ञान ऐसौ छाड़्यौ नही अभिमान,
निकसत प्रान जात छोड़ैगो नहिं कबहू ॥७॥

बालू माहिं तेल नहिं निकसत काहू विधि,
पाथर न भीजै बहु बरषत घन है ।
पानी के मथे तें कहु घीव नहिं पाइयत,
कूकस कै कूटे नहिं निकसत कन है ॥
शून्य कूं मूठी भरे तै हाथ न परत कछू,
ऊसर के बाहे कहा उपजत अन्न है ।
उपदेश औषध कवन विधि लागै ताहि,
सुन्दर असाध्य रोग भयौ जाकै मन है ॥८॥

---

(७) कुपेच-दुर्बुद्धि । छोरै-छुड़ावे सुलझावे । कौरीकरि-कौड़ी के समान ।

(८) घन-बादल । कूकस-भूसा । कन-कण, अन्न के दाने । शून्य-सूना आकाश । ऊसर-खारड़े की जमीन ।

वैरी घर माँहि तेरे जानत सनेही मेरे,
दारा सुत वित्त तेरौ पोसि पोसि षाहिगे ।
और ऊ कुटम्ब लोग लूटैं चहू ओर ही तैं,
मीठी मीठी वात कहि तोसौं लपटाहिगे ।।
सकट परैगो जव कोऊ नहि तेरौ तव,
अति ही कठिन वाकी वेर उठि जाहिगे ।
सुन्दर कहत तातैं झूठौ ही प्रपच यह,
सुपन की नाई सव देषत विलाहिगे ।।६।।

वारू कै मदिर माहि वैठि रह्यौ थिर होइ,
रापत है जीवने की आसा कैऊ दिन की ।
पल पल छीजत घटत जात घरी घरी,
बिनसत वार कहा षवरि न छिनकी ।।
करत उपाइ झूठे लैन दैन षान पान,
मूसा इत उत फिरै ताकि रही मिनकी ।
सुन्दर कहत मेरी मेरी करि भूलौ शठ,
चचल चपल माया भई किन किन की ।।१०।।

अन अन्न । (९) सनेही-प्रेमी । वित्त-धन । वाकी वेर-उनके मौके पर । उठि जाहिगे-मुंह फेर लेंगे ।

(१०) बारू-बालू मिट्टी । छिन की-क्षणभर की । मूसा-चूहा । मिनकी-बिल्ली । शठ-दुष्ट, मूर्ख ।

श्रवनू लै जाइ करि नाद की लै डारै पासि,
नैनवा लै जाइ करि रूप वसि कर्यौ है ।
नथुवा लै जाइ करि वहुत सुघावै फूल,
रसनू लै जाइ करि स्वाद मन हर्यौ है ॥
चरनू लै जाइ करि नारी सों सपर्श करै,
सुन्दर कोउक साध ठगन तैं डर्यौ है ।
काम ठग क्रोध ठग लोभ ठग मोह ठग,
ठगन की नगरी मैं जीव आइ पर्यौ है ॥११॥

पायौ है मनुप देह औसर बन्यौ है आइ,
ऐसी देह बार बार कहौ कहां पाइये ।
भूलत है बावरे ! तूं अवकै सयानौ होइ,
रतन अमोल यह काहे कौ ठगाइये ॥
समुझि बिचारि करि ठगन कौ संग त्यागि,
ठगा बाजी देषि कहूं मन न डुलाइये ।
सुन्दर कहत तोहि अब सावधान होइ,
हरि कौ भजन करि हरि मै समाइये ॥१२॥

---

(११) पासि-पाश, फांसी बंधन । रसनू-जीभ । सपर्श-स्पर्श । नाद-सुन्दर शब्द ।

(१२) औसर-अवसर । सयानौ-बुद्धिमान ।

घरी घरी घटत छीजत जात छिन छिन,
भीजत ही गरि जात माटी कौ सौ ढेल है ।
मुक्ति हू कै द्वारै आइ सावधान क्यौ न होई,
वार वार चढत न "त्रिया कौ सौ तेल है" ॥
करि लै सुकृत हरि भजन अखड उर,
याही मैं अन्तर परै यामैं ब्रह्म मेल है ।
मनुष जन्म पाइ जीति भावै हारि अब,
सुन्दर कहत यामैं जूवा कौ सौ खेल है ॥१३॥

जौवन कौ गयौ राज और सब भयौ साज,
आपुनि दुहाई फेरि दामामौ वजायौ है ।
लकुटी हथियार लिये नैनन की ढाल दीये,
सेत बार भये ताकौ तबू सौ तनायौ है ॥
दशन गये सु मानौ, दरवान दरि कीये,
जौगरी परी सु औरै विछौना विछायौ है ।
सीस कर कपत सु सुन्दर निकारयौ रिपु,
देषत ही देषत बुढापौ दौरि आयौ है ॥१४॥

(१३) सुकृत-सत्कर्म । अन्तर-भेद, दूरी । भावै-चाहे ।

(१४) सेतवार-सफेद बाल । दशन, दात । जौगरी परी-चमडी सिकुड गई ।

ईदव छंद

घीच तुचा कटि है लटकी,
कचऊ पलटे अजहू रत वामी ।
दंत भया मुख के उखरे,
नषरे न गये सुखरौ खर कामी ।।
कंपति देह सनेह सु दंपति,
संपति झपति है निस जामी ।
सुन्दर अन्त हु भौन तज्यौ,
"न भज्यो भगवंत सु लौन हरामी ।१५।
देह घटी पग भूमि मडै नहि,
औ लठिया पुनि हाथ लईजू ।
आखिहु नाक परै मुख तै जल,
सीस हलै कटि घीच नईजू ।।
ईश्वर कौ कबहू न सभारत,
दुख परै तब आहि दई जू ।
सुन्दर तौहु बिषै सुख बछत,
"घोरे गये पै बगै न गई जू" ।।१६।।

---

(१५) घीच-गदन। तुचा त्वचा, चमडी। कच शिर के बाल। वामी-स्त्री। रत-आसक्त। भया-भैया। नषरे-पूरे। खर-गधा। झपति है-जपता है। निसजामी-रात दिन। भौन-भवन, शरीरका घर। लौनहरामी-नमकहरामी।

(१६) बगै-पशुओ के स्थान पर उडने वाली मक्खी।

पाइ अमोलक देह इहै नर,
क्यौं न विचार करै दिल अन्दर ।
कामहु क्रोधहु लोभहु मोह हु,
लूटत है दस हू दिसि दुंदर ॥
तूं अब वाञ्छत है सुरलोक हि,
कालहु पाइ परै सु पुरंदर ।
छाडि कुवुद्धि सुवुद्धि हृदै धरि,
"आतमराम भजै किन सुन्दर" ॥१७॥

इन्द्रिय के सुख मानत है शठ,
याहित तै वहुते दुख पावै ।
ज्यौं जल मैं झष मास हि लीलत,
स्वाद बंध्यौ जल बाहरि आवै ॥
ज्यौं कपि मूंठि न छाडत है,
रसना वस वंदि पर्‌यौ विललावै ।
सुन्दर क्यौं पहिलै न सभारत,
"जौ गुर पाइ सु कान विधावै" ॥ १८ ॥

कौन कुबुद्धि भई घट अंतर,
तू अपने प्रभु सौं मन चोरै ।

---

(१७) दुंदर-द्वन्द्व । पुरंदर-इन्द्र । किन-क्यों नही ।

(१८) झष-मछली । लीलत-खाने के लिए । गुर-गुरु ।

भूलि गयौ विषया सुख मैं शठ,
लालच लागि रह्यौ अति थोरै ।।
ज्यौ कोऊ कचन छार मिलावत,
लेकरि पाथर सौ नग फोरै ।
सुन्दर या नर देह अमोलिक,
तीर लगी नवका कत वौरै ।।१९।।
देषित के नर सोभित है जैसे,
आहि अनूपम केरि कौ खभा ।
भीतर तौ कुछ साग नही पुनि,
ऊपर छीलक अवर दभा ।।
बोलत है पर नाही कछू सुधि,
ज्यौ बवयारि तै वाजत कुम्भा ।
रूसि रहै कपि ज्यौं छिन माहिसु,
याहि तै सुन्दर होत अचभा ।।२०।।
देषत के नर दीसत हैं पर,
लक्षन तौ पसु के सबही है ।
बोलत चालत पीवत खात सु,
वै घर वै वन जात सही है ।।

---

(१९) छार-राख । नग-हीरा मोती । कत-क्यो । वोरे-डुवाता है ।

(२०) केरि-केला । अवर-दभा-आडवर । बवियारि-फूक । कुम्भा-घडा ।

प्रात गये रजनी फिर आवत,
सुन्दर यौं नित भार वही है ।
और तो लक्षन आइ मिलै सब,
एक कमी सिर शृङ्ग नही है ॥२१॥

प्रेत भयौ कि पिशाच भयौ कि,
निशाचर सौ जितही तित डोलै ।
तूं अपनी सुधि भूलि गयौ,
मुख तैं कछु और की और ई बोलै ॥
मोई उपाइ करै जु मरै पचि,
बंधन तौ कबहूं नही खोलै ।
सुन्दर जा तन मैं हरि पावत,
सो तन नाश कियौ मति भोलै ॥२२॥

पेट तें बाहिर होत हि बालक,
आइ कैं मात पयोधर पीनौं ।
मोह बढ्यौ दिन ही दिन और,
तरुन्न भयौ त्रिय के रस भीनौं ॥
पुत्र पउत्र बध्यौ परिवार सु,
ऐसो ही भांति गये पन तीनौं ।
सुन्दर राम कौ नाम बिसारिनु,
आपुहि आपकौं बंधन कीनौं ॥२३॥

---

(२३) पयोधर-स्तन । तरुन्न-तरुण, जवान । त्रिय-स्त्री । पउत्र पौत्र, पोता । पन तीनों-तीनो अवस्था ।

मात पिता सुत भाइ बध्यौ,
जुवती के कहे कहा कान करे है ।
चोरी करै बटमारी करै
किरषी बनजी कर पेट भरै है ॥
शीत सहै सिर घाम सहै,
कहि सुन्दर सो रन माहि मरै है ।
वाध रह्यौ ममता सब सौ नर,
ताहि तें बाध्यौ ई बाँध्यो फिरै है ॥२४॥

तू ठगि कै धन और कौ ल्यावत,
तेरेऊ तौ घर औरई फोरै ।
आगि लगै सवही जरि जाइ सु,
तू दमरी दमरी कर जोरै ॥
हाकिम कौ डर नाहि न सूझत,
सुन्दर एक हि वार निचोरै ।
तू षरचै नहि आपु न षाइ सु,
"तेरी ही चातुरी तोहि ले बोरै" ॥२५॥

---

(२४) जुवती-युवती । किरषी-खेती । बनजी-व्यापार ।
(२५) चातुरी-चतुराई ।

मनहर छंद ।

करत प्रपच इनि पचनि कैं वसि पर्यौ,
परदारा रत भैं न आनत बुराई कौ ।
पर धन हर पर जीव कौ करत घात,
मद्य मास षाइ लव लेम न भलाई कौ ।।
होइगो हिसाब तव मुखतैं न आवैं ज्वाब,
सुन्दर कहत लेषा लेत राई राई कौ ।
इहा तैं किये बिलास जम की न तोहि त्रास,
उहातौ न व्है है कछु राज पोपाबाई कौ ।।२६।।

दुनिया कौ दौडता है औरति कौ लोडता है,
औजूद कौ मोडता है बटोही सराइ का ।
मुरगी कौ मोसता है बकरी कौ रोसता है,
गरीबू कौ शोसता है बेमिहर गाइ का ।।
जुलम कौ करता है धनी सौ न डरता है,
दोजग कौ भरता है खजान्ग बलाइ का ।

(२६। प्रपच-जजाल । परदारा-पराई स्त्री । भैं-भय । घात-हत्या । बिलास-भोग विलास । त्रास-डर । पोपाबाई को राज-पोल का राज्य ।

होइगा हिसाव तब आवैगा न ज्वाब कछु,
सुन्दर कहत गुन्हैगार है खुदाइ का ॥२७॥
कर कर आयौ जब षर षर काट्यौ नार,
भर भर बाज्यौ ढोल घर घर जान्यौ है ।
दर दर दौर्यौ जाइ नर नर आगै दीन,
बर बर बकत न नेक अलसान्यौ है ॥
सर सर सोधै धन तर तर तोरै पात,
जर जर काटत अधिक मोद मान्यौ है ।
फर फर फूल्यौ फिरै डर डरपै न मूढ,
हर हर हसत न सुन्दर सकान्यौ है ॥२८॥
जनम सिरानौ जाइ भजन बिमुख शठ,
काहे कौ भवन कूप बिन मीच मरि है ।
गहित अविद्या जानि शुक नलिनी ज्यौ मूढ,
करम विकरम करत नहि डरि है ।

(२७) लोड ता है-भोगता है । औजूद-शरीर । वेमिहर-निर्दय । दोजग-दोजख, नरक । बलाई का-पापो का । गुन्हैगार-अपराधी । धनी-स्वामी, परमेश्वर ।

(२८) कर कर आयो-पाप पुण्य करके जन्म लिया । नार-नाभिनाल । भर-भर भड भड । दर दर-घर घर के दरवाजे । वर वर-वड वड । सर-सर सोधै-सूत-सूत कर इकट्ठा करे । तर तर-तरड तरड । जर जर-जरड-जरड । मोद-आनद ।

आपु ही तै जात अध नरकनि वार बार,
    अजहु न शक मन माहि अब करि है ।
दुख कौ समूह अवलोकिके न त्रास होइ,
    सुन्दर कहत नर नागपासि परि है ।।२६।।
जग मग पग तजि सजि भजि राम नाम,
    काम कौ न तन मन घेर घेर मारिये ।
झूठ मूठ हठ त्यागि जागि भागि सुनि पुनि,
    गुनि ग्यान आन आन वारि वारि डारिये ।।
गहि ताहि जाहि शेप ईश शीस सुर नर,
    और बात हेत तात फेरि फेरि जारिये ।
सुन्दर दरद षोइ धोइ धोइ बार वार,
    सार सग रग अग हेरि हेरि धारिये ।।३०।।
झूठौ जग ऐन सुन नित्य गुरु बैन देखे,
    आपुने हु नैन तोऊ अध रहै ज्वानी मे ।
केते राव राजा रक भये रहे चलि गये,
    मिलि गये धूर माहि आये ते कहानी मे ।

---

(२६) जनम-जीवन । सिरानो जाय-वीत रहा है । मीच-मौत । गहित-अविद्‌या-अज्ञान ग्रस्त । विकरम-विकर्म, पापकर्म । नागपास-ससार का फदा ।

(३०) जगमग पग-ससारी मार्ग पर चलना । ज्ञान आन ज्ञान ले । आन-और बातें । हेत-प्रेम । दरद-दुख । सार सग-सत्सग । हेरि हेरि-तलाश कर कर ।

मुन्दर कहत अब ताहि न सुरत आवे,
चेते क्यो न मूढ चित लाय हिरदानी मे ।
भूले जन दाव जात लोह को सो ताव जात,
आप जात ऐसे जैसे नाव जात पानी मे ।।३१।।

डुमिला छंद

हठ योग धरौ तन जात भिया,
हरि नाम विना मुख धूर परै ।
शठ सोक हरौ छन गात किया,
चरि चाम दिना भुष पूरि जरै ।।
भठ भोग परौ गन पात धिया,
अरि काम किना सुख भूरि मरै ।
मठ रोग करौ घन घात हिया,
परि राम तिना दुख दूरि करै ।।३२।।

---

(३१) ऐन-ठीक से । ज्वानी-जवानी । रक-निर्धन । सुरत-ध्यान । हिरदानी-हृदय ।

(३२) भिया-अरे भाई । तन जात-जीवन-जा रहा है । शोक-चिंता । छन गात किया-शरीर क्षणभगुर है । चाम-चमडी या शरीर । चरि-परिवर्तनशील है । दिना भुष-आयु के दिन भोगकर । करि जरै-भस्म होगा । भठ भोग परो-भोगो की भट्टी मे पड़ा है । गन-गण, विषय समुदाय। खात-धिया-बुद्धि को खा रहे है । अरि काम किना-शत्रु का मोकाम कर रहे है । मठ-घर बार परिवार को । रोग

गुरु ग्यान गहै अति होइ सुखी,
मन मोह तजै सब काज सरै ।
धुर ध्यान रहै पति खोइ मुखी,
रन लोह बजै तब लाज परै ॥
सुरतान उहै हति दोइ रुखी,
तन. छोह सजै अब आज मरै ।
पुरथान लहै मति धोइ दुखी,
जन वोह रजै जब राज करै ॥३३॥

इति उपदेश चितावनी को अंग
सम्पूर्ण

करो-व्याधि समझो । घन-घात हिया-हृदय पर गहरी चोट करो ।

(३३) धुर-दृढ । पति-सासारिक प्रतिष्ठा । खोइ-त्याग कर । मुखी-गुरुमुखी है । रन लोह बजै-विघ्न बाधाओं से युद्ध करे । तन छोह तजे-देह का मोह छोड दे । अब आज मरे-मरने जीनेकी चिन्ता न करे । पुरथान लहै-परम पद प्राप्त करे । मति धोइ-बुद्धि को शुद्ध करे ।

अथ काल चितावनी को अंग ।।२।।

इन्दव छन्द

मन्दिर माल विलाइत है,
गज ऊट दमामे दिना इक दो है ।
तातहु मात त्रिया सुत बधव,
देपि घौ पामर होत बिछोहै ।।
झूठ प्रपच सौ गचि रह्यौ शठ,
काठ की पूतरि ज्यौ कपि मो है ।
मेरि ही मेरि करै नित सुन्दर,
आखि लगै कहि कौनको को है ।।१।।
ये मेरे देश बिलाइत है गज,
ये मेरे मन्दिर या मेरी थाती ।
ये मेरे मात पिता पुनि बधव,
ये मेरे पूत सु ये मेरे नाती ।।
ये मेरी कॉमनि केलि करै नित,
ये मेरे सेवक है दिन राती ।
सुन्दर वैसै हि छाडि गयौ सब,
तेल जर्यौ रु बुझी जब बाती ।।२।।
तै दिन च्यारि बिराम लियौ शठ,
तेरै कहै कछू व्है गई तेरी ।
जैसै हि बाप दादा गये छाडि सु,
तैसैही तू तजि है पल फेरी ।।

मारि है काल चपेटि अचानक,
होइ घरी माहि राख की ढेरी ।
सुन्दर ले न चलै कछु सग सु,
भूलि कहै नर मेरी ही मेरी ।।३।।
कै यह देह जराइ कै छार,
किया कि किया कि किया कि किया है ।
कै यह देह जमी महि षोदि,
दिया कि दिया कि दिया कि दिया है ।।
कै यह देह रहै दि: चारि,
जिया कि जिया कि जिया कि जिया है ।
दर काल अचानक आइ,
लिया कि लिया कि लिया कि लिया है ।।४।।
त सदा उपदेश बतावत,
केश सबै सिर शेत भये है ।
ममता अजहू नही छाडत,
मौत हू आइ सदेश दये है ।।
ज कि काल्हि चलै उठि मुरिख,
तेरे ही देखत केते गये है ।
दर क्यों नहि राम सभारत,
या जग मैं कहि कौन रहे हैं ।।५।।
मनेह न छाडत है नर,
गनत है शठ है थिर येहा ।

छीजत जाइ घटै दिन ही दिन,
दीसत है घट कौ नित छेहा ।।
काल अचानक आइ गहै कर,
ढाहि गिराइ करै तन खेहा ।
सुन्दर जानि इहै निहचै धरि,
एक निरजन सौ करि नेहा ।।६।।
तू कछु और बिचारत है नर,
तेरौ बिचार धर्यौ ई रहैगो ।
कोटि उपाइ करै धन कै हित,
भाग लिख्यौ तितनौ ई लहैगो ।।
भोर कि साझ घरी पल माझसु,
काल अचानक आइ गहैगो ।
राम भज्यौ न कियौ कछु सुकृत,
सुन्दर यौं पछताइ कहैगो ।।७।।
भूल गयौ हरि नाम कौ तू, शठ,
देखि धौं कौन सयोग वन्यौ है ।
काल अचानक आइ गहै कठ,
पेखि धौं भूठौ सौ तानो तन्यौ है ।।
छार करै सब चामकौ लूटै,
अनादि कौ ऐसे हि जीव हन्यौ है ।
कोऊ न होत सहाइ कौं कूटै,
अनादि कौ मुन्दर यासौ सन्यौ है ।।८।।

बीत गये पिछले सबही दिन,
　　आवत है अगिले दिन नेरे ।
काल महा बलवंत बडौ रिपु,
　　साधि रह्यौ सिर ऊपरि तेरे ॥
एक घरी महि मारि गिरावत,
　　लागत ताहि कछू नहि बेरे ।
सुन्दर संत पुकारि कहैं सब,
　　हू पुनि तोहि कहू अब टेरे ॥९॥

सोइ रह्यौ कहा गाफिल व्है करि,
　　तो सिर ऊपर काल दहारे ।
धामस धूमस लागि रह्यौ शठ,
　　आइ अचानक तोहि पछारे ॥
ज्यौ वन मैं मृग कूदत फादत,
　　चित्रक लै नख सौ उर फारे ।
सुन्दर काल डरै जिहि के डर,
　　ता प्रभुकौ कह क्यो न सभारे ॥१०॥

---

(१०) धामस धूमस-धूमधाम मे । चित्रक-चीता ।
(११) मूड ही मूड-सिर ही सिर । भराभर बाजे-आपस मे टकराते है, फूटने लगते है ।

चेतत क्यौ न अचेतन ! ऊ घ न,
काल सदा सिर ऊपरि गाजै ।
रोकि रहै गढ के सब द्वारनि,
तू तव कौन गली ह्वोइ भाजै ।।
आइ अचानक केश गहै जब,
पाकरि कै पुनि तोहि झुलाजै ।
सुन्दर कौन सहाइ करै जब,
मू डहि मू ड भराभरि बाजै ।।११।।

तू अति गाफिल ह्वोइ रह्यौ शठ,
कु जर ज्यौ कछू शक न आनै ।
माइ नही तन मै अपने बल,
मत्त भयौ विषया सुख ठानै ।।
खोसत खोसत बै दिन बीतत,
नीति अनीति कछू नहि जानै ।
सुन्दर केहरि काल महारिपु,
दत उपारि कुम्भस्थल भानै ।।१२।।

---

(१२) खोसत खासत-छीना झपटी मे । केहरि काल-रूपी शेर । कुम्भ स्थल-मस्तक ।

मात पिता जुवती सुत बधव,
आइ मिल्यौ इनसौ सनबधा ।
स्वारथ के अपने अपने सब,
सो यह नाहि न जानत अधा ॥
कर्म विकर्म करै तिनकै हित,
भार धरै नित आपने कधा ।
अत बिछोह भयौ सव सौ पुनि,
याहि तै सुन्दर है जग धधा ॥१३॥

करत करत धध कछुक न जानै अध,
आवत निकट दिन आगिलौ चपाकि दै ।
जैसै वाज तीतर कौ दाबत अचानचक,
जैसै बक मछगी कौ लीलत लपाकि दै ॥
जैसै मक्षिका की घात मकरी करत आइ,
जैसै साप मूपक कौ ग्रसत गपाकि दै ।
चेति रे अचेत नर सुन्दर सभारि राम,
ऐसै तोहि काल आइ लेइगौ टपाकि दै ॥१४॥

---

(१३) धधा-लेनदेन का व्यापार मात्र ।

(१४) चपाकि दे-चटपट । लपाकि दे-लपक कर । गपाकि दे-गप्प मे । घात-हत्या । टपाकि दे-टप्प से ।

मेरौ देह मेरौ गेह मेरौ परिवार सब,
मेरौ धन माल मै तौ बहुबिधि भारौं हौं ।
मेरे सव सेवक हुकम कोऊ मेटै नाहि,
मेरी जुवति कौ मैं नौं अधिक पियारौ हौ ॥
मेरौ बस ऊचौ मेरे बाप दादा ऐसै भये,
करत बडाई मैं तौ जगत उज्यारौ हौ ।
सुन्दर कहत मेरौ मेरौ कर जानै शठ,
ऐसैं नही जानै मैं तौ कालही कौ चारौ हू ॥१५॥

जब तै जनम धर्‌यौ तब ही तै भूलि पर्‌यौ,
बालापन माहि भूलौ समझ्यौ न रुख मैं ।
जोवन भयौ है जव कामवस भयौ तब,
जुवती सौ एकमेक भूल रह्यौ सुख मैं ॥
पुत्र ऊ पोउत्र भये भूलौ तब मोह् वाधि,
चिंता करि करि भूलौ जानै नहिं दुख मैं ।
सुन्दर कहत शठ तीनौं पन माहि भूलौ,
भूलौ भूलौ जाइ पर्‌यौ कालही के मुख में ॥१६॥

---

(१५) गेह-घर । जुवति-युवती, स्त्री, पत्नी ।

ऊठत बैठत काल जागत सोवत काल,
चलत फिरत काल काल चोर धर्यो है ।
कहत सुनत काल खात: हू पीवत काल,
काल ही के गाल मांहि हर हर हस्यो है ॥
तात मात बधु काल सुत दारा गृह काल,
सकल कुटब काल काल जाल फस्यो है ।
सुन्दर कहत एक राम विन सब काल,
काल ही कौ कृत्त कियौ अत काल ग्रस्यो है ॥१७॥
जब तै जनम लेत तब ही तै आयु घटै,
माई तौ कहत मेरौ वडौ होत जात है ।
आज और कालिह और दिन दिन होत और,
दौर्यौ दौर्यौ फिरत खेलत अरु खात है ॥
वालापन वीत्यौ जब जोवन लग्यौ है आइ,
जौवन हू वीते बूढौ डोकरो दिखात है ।
सुन्दर कहत ऐसै देखत ही वुझि गयौ,
तेल घटि गये जैसे दीपक वुझात है ॥१८॥
सव कोऊ ग्रैसै कहैं काल हम काटत है,
काल तौ अखड नाश सवको करतु है ।

---

(१७) कृत्त-कृत्य, काम । कुटम्व-कुटुम्ब, परिवार ।
चोर-चारो तरफ ।

जाकै भय ब्रह्मा पुनि होत है कंपाइमान,
जाकै भय सुर असुर इंद्रऊ डरतु है ॥
जाकै भय शिव अरु शेषनाग तीनों लोक,
केऊक कलप बीतें लोमश परतु है ।
सुन्दर कहत नर गर्व गुमान कर,
तू तौ शठ एकई पलक मै मरतु है ॥१९॥

काल सौ न बलवंत कोऊ नहिं देखियत,
सब कौ करत अंत काल महाजोर है ।
काल ही कौ डर सुन भाग्यौ मूसा पैंगबर,
जहा जहा जाइ तहा तहां वाकौ गोर है ॥
काल ही भयानक भैभीत सब किये लोक,
स्वर्ग मृत्यु पाताल मैं काल ही कौ सोर है ।
सुन्दर काल कोभी काल एक ब्रह्म हैं अखंड,
वासौं काल डरै जोई चल्यौ उहि बोर है ॥२०॥

बरखा भये तैं जैसैं बोलत भभीरी सुर,
खंड न परत कहुं नेकहुं न जांनिये ।
जैसैं पूंगी वाजत अखंड सुर होत पुनि,
ताहू मैं न अंतर अनेक राग गानिये ॥

(१९) कंपाइमान-भयभीत । लोमश-एक प्रसिद्ध महा-दीर्घायु ऋषि । गोर-घाव, भय या कबर।सोर-शोर, हल्ला ।

जैसै कोऊ गुडी कौ चढावत गगन माहि,
ताहू की तौ धुनि मुनि वैसै ही बखानिये ।
सुन्दर कहत तैसै काल कौ प्रचड बेग,
रात दिन चल्यौ जाइ अचिरज मानिये ॥२१॥

माया जोरि जोरि नर राखत जतन करि,
कहत है एक दिन मेरै काम आइ है ।
तोहि तौ मरत कछु बार नहि लागै शठ,
देखत ही देखत बुलूला सो बिलाइ है ॥
धन तौ धर्यौई रहै चलत न कौडी गहै,
रीते ही हाथनि जैसौ आयौ तैसौ जाइ है ।
करिलै सुकृत यह बरिया न आवै फेरि,
सुन्दर कहत पुनि पीछै पछिताइ है ॥२२॥

बावरौ सौ भयौ फिरै बावरी ही बात करै,
बावरे ज्यौ देत बायु लागत बौरानौ है ।
माया कौ उपाइ जानै माया की चातुरी ठानै,
माया सौं मगन अति माया लपटानौ है ॥

---

(२१) झझीरी-झीगुर कीडा । गुडी-पतग ।

(२२) बलूला-पानी का बुदबुदा, झाग । सुकृत-सत्कर्म । बरिया-मौका, अवसर । देत बायु-बकवाद करता है । बोरानो बोराया हुआ सा । चातुरी-चतुराई ।

जौबन कौ मद मातौ गिनत न कोऊ नातौ,
काम बस कामिनी कैं हाथ ही बिकानौ है ।
अति ही भयौ बेहाल सूझत न माथै काल,
सुन्दर कहत ऐसौ और कौ दिवानौ है ॥२३॥
झूठौ धन झूठौ धाम झूठौ कुल झूठौ काम,
झूठी देह झूठौ नाम धरिकै बुलायौ है ।
झूठौ तात झूठी मात झूठे सुत दारा भ्रात,
झूठौ हित मानि मानि झूठौ मन लायौ है ॥
झूठौ लैन झूठौ दैन झूठौ मुख वोलै बैन,
झूठै झूठै करि फैन झूठ ही कौ धायौ है ।
झूठ ही मैं एतौ भयौ झूठ ही मैं पचि गयौ,
सुन्दर कहत साच कबहू न आयौ है ॥२४॥

दीर्घाक्षरी

झूठे हाथी झूठे घोरा झूठे आगै झूठा दौरा,
झूठा बध्या झूठा छोडा झूठा राजा रानी है ।
झूठी काया झूठी माया झूठा झूठै धधा लाया,
झूठा मूवा झूठा जाया झूठी याको वानी है ॥
झूठा सोवै झूठा जागै झूठा झूझै झूठा भाजै,
झूठा पीछै झूठा लागै झूठै झूठी मानी है ।
झूठा लीया झूठा दीया झूठा खाया झूठा पीया,
झूठा सौदा झूठै कीया ऐसा झूठा प्रानी है ॥२५॥

---

(२५) बध्या-बधा हुआ । छोडा—छूटा हुआ ।

झूठ सौ बध्यौ है लाल ताहि तें ग्रसत काल,
काल बिकराल व्याल सबही कौ खात है ।
नदी कौ प्रवाह जैमैं जात है समुद्र माहि,
तैसैं जग काल हि कै मुख मैं समात है ।।
देह सौ ममत्व तातैं काल कौ भैं मानत है,
ज्ञान उपजैं तें वह कालहू विलात है ।
सुन्दर कहत परब्रह्म है सदा अखड,
आदि मधि अन्त एक सोई ठहरात है ।।२६।।

इन्दव छद

काल उपावत काल खपावत,
काल मिलावत है गहि माटी ।
काल हलावत काल चलावत,
काल सिखावत है सव आटी ।।
काल बुलावत काल भुलावत,
काल डुलावत है वन घाटी ।
सुन्दर काल मिटैं तवही पुनि,
ब्रह्म विचार पढैं जव पाटी ।।२७।।

इति काल चेतावनी कौ अग
सम्पूर्ण

---

(२६) लाल-प्यारे ।

(२७) आटी-दाव पेंच । पाटी-पाठ ।

अथ देहात्म विछोह को अंग ।।४।।

इन्दव छन्द

वै श्रवना रसना मुख वैसै हि,
वैसै हि नासिका वैसं हि अखी ।
वै कर वै पग वै सब द्वार सु,
वै नख सीस हि रोम असखी ।।
वैसैहि देह परी पुनि दीसत,
एक बिना सब लागत खखी ।
सुन्दर कोऊ न जानि सकै यह,
बोलत हो सो कहा गयौ पखी ।।१।।

बोलत चलात पीवत खात सु,
सीचत है द्रुम कौ जैसे माली ।
लेतहु देतहु देखत रीझत,
तोरत तान वजावत ताली ।।
जा महि कर्म विकर्म किये सब,
है यह देह परी अब ठाली ।
सुन्दर सो कतहू नहि दीसत,
खेल गयौ इक खेल सौ ख्याली ।।२।।

---

(१) खखी-सूना ।

(२) ठाली-सूनी, वेकार । ख्याली-खिलाडी आत्मा ।

मात पिता जुवती सुत बंधव,
　　लागत है सब कौ अति प्यारो ।
लोग कुटम्ब खरो हित राखत,
　　होइ नही हमतें कहु न्यारो ॥
देह सनेह तहां लग जानहु,
　　बोलत है मुख शब्द उचारो ।
सुन्दर चेतनि शक्ति गई जब,
　　बेगि कहै घर माहि निकारो ॥३॥
रूप भली तब ही लग दीसत,
　　जौलग बोलत चालत आगै ।
पीवत खात सुनै अरु देखत,
　　सोइ रहै उठिकै पुनि जागै ।
मात पिता भइया मिलि बैठत,
　　प्यार करै जुवती गर लागे ।
सुन्दर चेतनि शक्ति गई जब,
　　देखत ताहि सबै डरि भागै ॥४॥

मनहर छंद

कौन भांति करतार कियौ है शरीर यह,
　　पावक कै मध्य देखौ पानी कौ जमावनौ ।
नासिका श्रवन नैन बदन रसन बैन,
　　हाथ पाव अंग नख सिख कौ बनावनौ ॥

(३) जुवती-युवती, स्त्री ।

अजब अनूप रूप चमक दमक ऊप,
सुन्दर शोभित अति अधिक सुहावनौ ।
जाही छिन चेतना सकति जब लीन होइ,
ताही छिन लागत सबनिकौ अभावनो ।।५।।

मृत्तिका कौ पिंड देह ताही मै युगति भई,
नासिका नयन मुख श्रवन बनाये है ।
शीस हाथ पाव अरु अंगुली बिराजमान,
अंगुली कै आगै पुनि नखऊ लगाए है ।।
पेट पीठि छाती कंठ चिबुक अधर गाल,
दशन रसन बहु वचन सुहाए है ।
सुन्दर कहत जब चेतना सकति गई,
वही देह जारि बारि छार करि आये है ।।६।।

देह तो प्रगट यह ज्यौ की त्यौ ही जानियत,
नैन के झरौखे माहि झाकत न देखिये ।
नाक के झरौखे माहि नैकु न सुबास लेत,
कान के झरौखे माहि सुनत न लेखिये ।।

(५) पावक-अग्नि । ऊप-सफाई । सकति-शक्ति । अभावनो-अरुचिकर, भद्दा ।

(६) चिबुक-ठोडी । अधर-होठ । दशन-दात ।

मुख के झरौखे मै वचन न उचार होत,
    जीभ हू कौ खटरस स्वाद न विसेखिये ।
सुन्दर कहत कोउ कौन बिधि जानै ताहि,
    कारौ पीरौ काहू द्वार जातौ हू न पेखिये ।।७।।

माई तौ पुकारि छाती कूटि कूटि रोवत है,
    बाप हू कहत मेरौ नन्दन कहा गयौ ।
भाइया कहत मेरी बाह आज दूरि भई,
    बहन कहत मेरै बीर दुख है दयौ ।।
कामिनी कहत मेरौ सीस सिरताज कहा,
    उनि ततकाल हाथ मै सिधौरा है लयौ ।
सुन्दर कहत ताहि कोऊ नहि जानि सकै,
    बोलत हुतौ सु यह छिन मैं कहा भयौ ।।८।।

रज अरु बीरज कौ प्रथम सयोग भयौ,
    चेतना सकति तब कौन भाति आई है ।
कोऊ तौ कहत वीज मध्य ही कियौ प्रवेस,
    किनहु क पच मास पीछै कै सुनाई है ।।

---

(८) सिधोरा-सिंदूर नारियल आदि सती होने का सामान । बोलत हुतो-बोलने वाला ।

देह कौ बियोग जब देखत ही होइ गयौ,
तब कोऊ कहै कहा जाइ कै समाई है ।
पण्डित रिषीश्वर तपीश्वर मुनीश्वर ऊ,
सुन्दर कहत यह किनहू न पाई है ॥९॥

तबहि लौ क्रिया सब होत है विविध भांति,
जब लग घट माहि चेतन प्रकास है ।
देह कै अशक्त भये क्रिया सब थकि जात,
जब लग श्वास चलै तब लग आश है ॥
श्वासऊ थक्यौ है जब रोवन लगे है तब,
सब कोऊ कहैं यह भयौ घट नास है ।
काहू नहि देख्यौ किहि और कौन कहा गयौ,
सुन्दर कहत यह बडौई तमास है ॥१०॥

देह तौ सुरूप तौलौ जौलौ है अरूप माहि,
सब कोऊ आदर करत सनमान है ।
टेढी पाग बाधि वार वार ही मरोरै मूछ,
बाह उसकारै अति धरत गुमान है ॥

---

(१०) असक्त-अशक्त, असमर्थ ।

देस देस ही के लोक आइके हजूरि होहि,
बैठि करि तखत कहावै सुलतान है।
सुन्दर कहत जब चेतना सकति गई,
उहै देह ताकी कोऊ मानत न आन है ॥११॥

॥ इति देहात्म बिछोह को अंग सम्पूर्ण ॥

(११) तमास-तमाशा, अचम्भे की बात।

अथ तृष्णा को अंग ।।५।।

इन्दव छन्द

नैनन की पल ही पल मैं,
छिन आध घरी घटिका जु गई है ।
याम गयौ युग याम गयौ,
पुनि साझ गई तब भोर भई है ।।
आज गई अरु काल्हि गई,
परसौ तरसौ कछु और ठई है ।
सुन्दर ऐसै ही आयु गई,
तृष्णा दिन ही दिन होत नई है ।।१।।

दुर्मिला छद

कन ही कनकौ बिललात फिरै,
शठ जाचत है जन ही जन कौ ।
तन ही तन की अति सोच करै,
नर खात रहै अन ही अन कौ ।।
मन ही मन की तृष्णा न मिटी,
पुनि धावत है धन ही धन कौ ।
छिन ही छिन सुन्दर आयु घटी,
कबहू न गयौ बन ही बन कौ ।।२।।

---

(१) घटिका-घडी । याम-पहर । युग-दो । (२) कन-कण, अन्न के दाने । अन-अन्न ।

इन्दव छन्द

जौ दस बीस पचास भये शत,
होहि हजारनि लाख मगैंगी ।
कोटि अरब्ब खरब्ब असखि,
पृथीपति होने की चाह जगैंगी ॥
स्वर्ग पताल कौ राज करौ,
तृष्णा अधिकी अति आग लगैंगी ।
सुन्दर एक सन्तोष बिना शठ,
तेरी तौ भूख न क्यौ ही भगैंगी ॥३॥

लाख करोरि अरब्ब खरब्बनि,
नीलि पदम्म तहा लगं खाटी ।
जोरि हि जोरि भण्डार भरे सब,
और रही सु जिमी तर दाटी ॥
तोहु न तोहि सतोष भयौ शठ,
सुन्दर तै तृष्णा नही काटी ।
सुझत नाहि न काल सदा सिर,
मारि कै थाप मिलाइ है माटी ॥४॥

---

(४) जमी तरदाटी -जमीन में गाड दी ।

भूख लिये दसहू दिस दौरत,
ताहि तै तूं कबहू न अघै है ।
भूख भण्डार भरै नहि कैसै हु,
जो धन मेरु कुबेर लौ पै है ॥
तू अब आगै ही हाथ पसारत,
ताहि तै हाथ कछू नहि ऐहै ।
सुन्दर क्यौ नहि तोष करै नर,
खाइ हि खाइ केतौइक खैहै ॥५॥

भूख नचावत रंक हि राज हि,
भूख नचाइकै विश्व विगोई ।
भूख नचावत इन्द्र सुरासुर,
और अनेक जहा लग जोई ॥
भूख नचावत है अध ऊरध,
तीनहू लोक गनै कहा कोई ।
सुन्दर जाइ तहा दुख ही दुख,
ज्ञान बिना न कहू सुख होई ॥६॥

(६) विगोई-विगाड देती है। अध-नीचे के लोक। ऊरध-ऊपर के लोक।

पेट पसार दियौ जितही तित,
तै यह भूख कितीयक थापी ।
और न छोर कछू नहि आवत,
मैं बहु भाति भली बिधि मापी ॥
देखत देह भयौ सब जीरन,
तू नित नौतन आहि अद्यापी ।
सुन्दर तोहि सदा समझावत,
हे तृषणा ! अजहू नही धापी ॥७॥

तीनहू लोक अहार कियौ फिर,
सात समुद्र पियौ सब पानी ।
और जहा तहा ताकत डोलत,
काढत आखि डरावत प्रानी ॥
दात दिखावत जीभ हलावत,
याहि तै मै यह डाइनि जानी ।
सुन्दर खात भये कितने दिन,
हे तृषणा ! अजहू न अघानी ॥८॥

(७) जीरन-जीर्ण, जर्जर। नौतन-नूतन, नया। अद्यापी-अभी भी।

पांव पताल परैं गये नीकसि,
सीस गयौ असमान अघेरौ ।
हाथ दसौ दिसि कौं पसरैं पुनि,
पेट भरैं न समुद्र सुमेरौ ।।
तीनहु लोक लिये मुख भीतरि,
आंखिहु कान बधे चहु फेरौ ।
सुन्दर देह धर्‌यौ अति दीरघ,
हे तृषणा ! कहुं छेह न तेरौ ।।९।।

बादि वृथा भटकैं निस बासर,
दूरि कियौ कबहूं नहि धोषा ।
तूं हतियारिन पापिनि कोढनि,
साच कहू मति मानहि रोषा ।।
तोहि मिल्यौ तबतैं भयौ बधन,
तूं मरि है तबही होइ मोषा ।
सुन्दर और कहा कहिये तोहि,
हे तृषणा ! अब तौ करि तोषा ।।१०।।

---

(९) अघेरो-आगे । सुमेरौ-सुमेरु पर्वत । (१०) हतियारिन-हत्यारी । मोषा-मोक्ष, मुक्ति, छुटकारा ।

क्यौ जग माहि फिरै भख मारत,
स्वारथ कौंन पर्यौ जिहि जोलै ।
ज्यौ हरिहाइ गऊ नहि मानत,
दूध दुह्यौ कछु सो पुनि ढोलै ।।
तू अति चचल हाथ न आवत,
नीकसि जाइ नही मुख बोलै ।
सुन्दर तौहि कह्यो बेरि केतक,
है तृषणा ! अब तू मति डोलै ।।११।।
तै कोऊ कान धरी नहि एकहु,
बोलत बोलत पेट ही पाक्यो ।
हौ कोऊ बात बनाइ कहू जब,
त तब पीसत ही सब फाक्यौ ।।
केतक द्यौस भये परमोधत,
तै अब आगै हि कौ रथ हाक्यौ ।
सुन्दर सीख गई सबही चलि,
हे तृषणा ! कहि कै तोहि थाक्यौ ।।१२।।

---

(११) हरिहाई-हरा चारा खाने को उतावली ।

(१२) द्यौस-दिवस, दिन । परमोधत-समझाते-समझाते । पीसत ही-पीसते पीसते ही ।

तूं हि भ्रमाइ प्रदेस पठावत,
बूडत जाइ समुद्र जिहाजा ।
तूं हि भ्रमाइ पहार चढावत,
बादि वृथा मरि जाइ अकाजा ।।
तै सब लोक नचाइ भली बिधि,
भांड किये सब रक रु राजा ।
सुन्दर तोहि दुखाइ कहूं अब,
हे तृषणा ! तोहि नैकु न लाजा ।।१३।।

।। इति तृष्णा को अग सम्पूर्ण ।।

।। अथ अधीरज उराहनैं को अंग ।।६।।

इन्दव छद

पाव दिये चलनै फिरनै कोउ,
हाथ दिये हरि कृत्त करायौ ।
कान दिये सुनियें हरि को जस,
नैंन दीये तिनि माग दिखायौ ।।
नाक दीयौ मुख शोभत ता करि,
जीभ दई हरि को गुन गायौ ।
सुन्दर साज दियौ परमेश्वर,
पेट दियौ परि पाप लगायौ ।।१।।
कूप भरै अरु वापि भरै पुनि,
ताल भरै बरखा रितु तीनौ ।
कोठि भरै घट माट भरै,
घर हाट भरै सब ही भरि लीनौं ।।
खदक खास भुखार भरै परि,
पेट भरै न बडौ दर दीनौ ।
सुन्दर रीतौ ही रीतौ रहै यह,
कौन खडा परमेश्वर कीनौ ।।२।।

---

(१) अधीरज-अधीरता । उराहना-उलाहना, उपालभ देना । (२) वापि-बावडी । माट-बडा मटका । खदक-बडा गढ्डा । खास-खाई । भुखार-भखारी । दर-गड्ढा ।

मनहर छन्द

किधौ पेट चूल्हा किधौ भाठी किधौं भार आइ,
जोई कछु झोकिये सु सब जरि जातु है ।
किधौं पेट थल किधौ बावी किधौ सागर है,
जितौ जल परै तितौ सकल समातु है ॥
किधौ पेट दैत्य किधौ भूत प्रेत राक्षस है,
खाउ खाउ करै कहू नैकु न अघातु है ।
सुन्दर कहत प्रभु कौन पाप लायौ पेट,
जबतैं जनम भयौ तब ही को खातु है ॥३॥

बिग्रह तौ बिग्रह करत अति बार बार,
तनु पुनि तनुक न कबहू अधायौ है ।
घट न भरत क्यौ ही घट्योई रहत नित,
शरीर रिराइ मैं तौ कछुक न खायौ है ॥
देह देह कहत ही कहत जनम बीत्यौ,
पिंड पिंड काजै निसि दिन ललचायौ है ।
पुदगल गिलत गिलत न तृपत होइ,
सुन्दर कहत बपु कौन पाप लायौ है ॥४॥

---

(३) किधो-क्या अथवा बनागा । भाटी-भट्टी ।

(४) विग्रह-शरीर या झगडा । तनु-शरीर । तनुक-थोडा सा भी । रिराइ-रोता ही रहता है । पुदगल-शरीर ।

पाजी पेट काज कोतवाल कौ अधीन होत,
    कोतवाल सु तौ सिकदार आगै लीन है ।
सिकदार दीवान कै पीछै लग्यौ डोलै पुनि,
    दीवान हू जाइ पातिसाह आगै दीन है ॥
पातिसाह कहै या खुदाइ मुझै और देइ,
    पेट हो पसारै, नहि पेट बसि कौन है ।
सुन्दर कहत प्रभु क्यौ ही नहि भरै पेट,
    एक पेट काज एक एक कौ अधीन है ॥५॥

तै तो प्रभु दीयौ पेट जगत नचायौ जिन,
    पेट ही के लिये घर घर द्वार फिर्यौ है ।
पेट ही के लिये हाथ जोरि आगै ठाडौ होइ,
    जोइ जोइ कह्यौ सोइ सोइ उनि कर्यौ है ॥
पेट ही कै लिये पुनि मेघ सीत घाम सहै,
    पेट ही कै लिये जाइ रनु माहि मर्यौ है ।
सुन्दर कहत इन पेट सब किये भाड,
    और गैल छूटी परि पेट गैल पर्यौ है ॥६॥

---

(५) सिकदार-फौजदार, सेनापति । दीवान-मन्त्री । पातिसाह, राजा, बादशाह ।

(६) रनु-रण, युद्ध । भाड-नाच नाचने वाला ।

इन्दव छंद

पेट ही कारन जीव हतै बहु,
पेट ही मॉस भखै रु सुरापी ।
पेट ही लै करि चोरी करावत,
पेट ही कौ गठरी गहि कापी ॥
पेट ही पासि गरे महिं डारत,
पेटहि डारत कूप हु बापी ।
सुन्दर काहे कौ पेट दियौ प्रभु,
पेट सौ और नही कोउ पापी ॥९॥

औरन कौ प्रभु पेट दिये तुम,
तेरै तौ पेट कहू नहि दीसै ।
ये भटकाइ दिये जित ही तित,
कोऊक राधत कोऊक पीसै ॥
पेट ही कारन नाचत है सब,
ज्यौ घरही घर नाचत कीसै ।
सुन्दर आपु न खाहु न पीयहु,
कौंन करी इन ऊपर रीसै ॥१०॥

---

(९) सुरापी-शराव पीने वाला । कापी–काटता है । बापी-बावडी ।

(१०) कीसे-बदर । रीसे-क्रोध, नाराजी । (११) इकत-एकात स्थान ।

मनहर छद

काहे कौ काहू के आगै जाइ कै अधीन होइ,
दीन दीन बचन उचार मुख कहते ।
जिनकै तौ मद अरु गरब गुमान अति,
तिनकै कठौर बैन कबहु न सहते ॥
तुम्हारे ही भजन सौं अधिक लै लीन अति,
सकल कौ त्यागि कै इकत जाइ गहते ।
सुन्दर कहत यह तुमही लगायौ पाप,
पेट न हुतौ तौ प्रभु बैठे हम रहते ॥११॥

पेट ही कै बसि रक पेट ही कै बसि राव,
पेट ही कै बसि और खान सुलतान है ।
पेट ही कै बसि योगी जगम सन्यासी सेख,
पेट ही कै बसि बनवासी खात पान है ॥
पेट ही कै बसि रिषि मुनि तपधारी सब,
पेट ही कै बसि सिद्ध साधक सुजान है ।
सुन्दर कहत नही काहू कौ गुमाँन रहै,
पेट ही कै बसि प्रभु सकल जिहान है ॥१२॥

॥ इति अधीरज उराहने को अंग सम्पूर्ण ॥

---

(१२) जिहान-ससार ।

अथ विश्वास को अंग ।।७।।

इन्दव छंद

होहि निचित करै मत चित हि,
    चच दई सोई चित करैगौ ।
पाव पसारि पर्यौ किन सोवत,
    पेट दियौ सोइ पेट भरैगौ ।।
जीव जिते जल के थल के पुनि,
    पाहन मे पहुचाइ धरैगौ ।
भूख ही भूख पुकारत है नर,
    सुन्दर तू कहा भूख मरैगौ ।।१।।

धीरज धारि बिचार निरतर,
    तोहि रच्यौ सु तौ आपुहि ऐ है ।
जेतिक भूख लगी घट प्रान ही,
    तेतिक तू अनयासहि पै है ।।
जौ मन मैं तृषणा करि धावत,
    तौ तिहु लोक न खात अघै है ।
सुन्दर तू मति सोच करै कछु,
    चच दई सोई चूनि हु दै है ।।२।।

---

(१) चिंत-चिंता । चच-चौच, मुह । (२) चूंनि-भोजन । अनयास-अनायास, बिना परिश्रम के ।

नैकु न धीरज धारत है नर,
 आतुर होइ दसौ दिस धावै ।
ज्यौ पसु खैंचि तुडावत बधन,
 जौ लग नीर न आवै ही आवै ।।
जानत नाहि महामति मूरख,
 जा घर द्वार धनी पहुचावै ।
सुन्दर आपु कियौ घडि भाजन,
 सो भरि है मति सोच उपावै ।।३।।
भाजन आपु घड्यौ जिनि तौ,
 भरि है भरि है भरि है भरि हैं जू ।
गावत है तिनकै गुन कौ,
 ढरि है ढरि हैं ढरि है ढरि है जू ।।
सुन्दर दास सहाइ सही,
 करि है करि है करि है करि है जू ।
आदि हू अंत हू मध्य सदा,
 हरि है हरि है हरि हैं हरि है जू ।।४।।
काहे कौ दौरत है दशहू दिश,
 तू नर देखि कियौ हरि जू कौ ।
बैठि रहै दुरिकै मुख मूंदि,
 उघारिकै दांत खवाइ है टूकौ ।।

(३) नीर-चारा । भाजन-शरीर रूपी वर्तन । धनी-स्वामी । (४) ढरि है-दया करेंगे । दुरिके-दुबक कर ।

गर्भ थकै प्रतिपाल करी जब,
　　होइ रह्यौ तब तू जड मूकौ ।
सुन्दर क्यौ बिललात फिरै अब,
　　राखि हृदै बिसवास प्रभू कौ ।।५।।
जा दिनतै गर्भवास तज्यौ नर,
　　आइ अहार लियौ तबही कौ ।
खात हि खात भये इतने दिन,
　　जानत नाहि न भूछ कही कौ ।।
दौरत धावत पेट दिखावत,
　　तू शठ कीट सदा अन ही कौ ।
सुन्दर क्यौ बिसवास न राखत,
　　सो प्रभु विश्व भरै कबही कौ ।।६।।
खेचर भूचर जे जल के चर,
　　देत अहार चराचर पोखै ।
वे हरि जू सब कौ प्रतिपालत,
　　जो जिहि भाति तिसी बिधि तोखै ।।
तू अब क्यौ बिसवास न राखत,
　　भूलत है कत धोखै ही धोखै ।
तोहि तहा पहुचाइ रहै प्रभु,
　　सुन्दर बैठि रहै किन ओखै ।।७।।

---

(६) भूछ-भूख ।
(७) ओखै-गुप्त स्थान ।

मनहर छंद

काहे कौं बघूरा भयौ फिरत अज्ञानी नर,
तेरं तौ रिजक तेरै घर बैठै आइ है।
भावै तू सुमेर जाहि भावै जाहि मारू देश,
जितनौक भाग लिख्यौ तितनौक पाइ है।
कूप माझ भरि भावै सागर कै तीर भरि,
जितनौंक भाडौ, नीर तितनौ समाइ है।
ताहि तै सतोष करि सुन्दर बेसास धरि,
जिनतौ रच्यौ है घट सोई जू भराई है ।।८।।

काहे को करत नर उद्यम अनेक भाति,
जीवन है थोरो तातै कल्पना निवारिये।
साढे तीन हाथ देह छिनक मे छूटि जाय,
ताके लिए ऊचे ऊचे मन्दिर सवारिये।
माल हू मुलक भये तृपति न क्यो ही होय,
आगे ही को पसरत इन्द्रिय क्यो न मारिये।
सुन्दर कहत तोहि बावरे समझि देख,
जितनीक सोर पाँव तितने पसारिये ।।९।।

काहे कौं फिरत नर दीन भयौ घर घर,
देखियत तेरौ तौ अहार एक सेर है।
जाको देह सागर मैं सुनी शत ज जन की,
ताहू कौ तौ देत प्रभु यामैं नहि फेर है ।।

भूखौ कोऊ रहत न जानिये जगत माहि,
कीरी अरु कुंजर सबनि ही कौ देत है ।
सुन्दर कहत तूं वेसास क्यौ न राखै शठ,
बार बार समुझाइ कह्यौ केती बेर है ॥१०॥

तेरे तौ अधीरज तू आगिली ही चित करे,
आज तौ भर्‌यौ है पेट कालिह् कैसी होइ है ।
भूखौ ही पुकारै अरु दिन उठि खातौ जाइ,
अति ही अज्ञानी जाकी मति गई खोइ है ॥
ताकौं नहिं जानै शठ जाकौ नाम विश्वभर,
जहा तहा प्रगट सबनि देत सोइ है ।
सुन्दर कहत तोहि वाकौ तौ भरौसौ नाहि,
एक बिसवास बिन याही भाति रोइ है ॥११॥

देखि धौं सकल विश्व भरत भरनहार,
चूंच कै समान चूंनि सबही कौ देत है ।
कीट पशु पखि मच्छ कच्छ अजगर पुनि,
उनकै न सौदा कोऊ न तौ कछु खेत है ॥
पेट ही कै काज रात दिवस भ्रमत शठ,
मैं तौ जान्यौ नीकै करि तू तौ कोऊ प्रेत है ।
मानुष सरीर पाइ करत है हाइ हाइ,
सुन्दर कहत नर तेरै सिर रेत है ॥१२॥

---

(१०) जोजन-योजन, चार कोस । शत-सो ।

तूं तौ भयौ बावरौ उतावरौ फिरत अति,
प्रभु कौ बेसास गहि काहे न रहतु है।
तेरौ तौ रिजक है सु आइ है सहज माहि,
यौ हि चिता करि करि देह कौ दहतु है॥
जिनि यह नख सिख साजिकै सवार्यौ तोहि,
अपने किये की सोइ लाज कौ बहतु है।
काहे कौ अज्ञानी कछु सोच मन माहि करै,
भूखौ तू कदे न रहै सुन्दर कहतु है॥१३॥
जगत मैं आइ तै बिसार्यौ है जगतपति,
जगत कियौ है सोई जगत भरतु है।
तेरै चिता निश दिन और ई परी है आइ,
उद्यम अनेक भांति भाति के करतु है॥
इत उत जाइकै कमाइ करि ल्याऊ कछु,
नैकु न अज्ञानी नर धीरज धरतु है।
सुन्दर कहत एक प्रभु के विश्वास बिन,
वादि कै वृथा ही शठ पचिकै मरतु है॥१४॥

॥ इति विश्वास को अंग सम्पूर्ण ॥

अथ देहमलिनता व गर्वप्रहार को अंग ।।८।।

मनहर छंद

देह तौ मलीन अति बहुत विकार भरे,
  ताहू माहि जरा व्याधि सब दुख राशी है ।
कबहूक पेट पीर कबहूक सिर वाहि,
  कबहूक आंखि कान मुख मै बिथासी है ।।
औरऊ अनेक रोग नख सिख पूरि रहे,
  कबहूंक श्वास चले कबहूक खासी है ।
ऐसौ या शरीर ताहि आपुनौ के मानत है,
  सुन्दर कहत यामैं कौन सुखवासी है ।।१।।

जा शरीर माहि तू अनेक सुख मानि रह्यौ,
  ताही तू बिचार यामैं कौन बात भली है ।
मेद मज्जा मास रस, रकत रगनि माहि,
  पेट हू पिटारी सी मैं ठौर ठौर मली है ।।
हाडनि सौं मुख भर्यौ हाड ही के नैन नाक,
  हाथ पाव सोऊ सब हाड ही की नली है ।
सुन्दर कहत याहि देखि जनि भूलै कोइ,
  भीतरि भगार भरि ऊपरि तैं कली है ।।२।।

---

(१) बिथा-व्यथा, पीडा, दर्द । (२) मली-मैला, मल-मूत्र आदि । भगार-रद्दी भद्दी चीजें । कली सुन्दर ।

इन्दव छन्द

हाड कौ पिंजर चाम मढ्यौ सब,
माहि भर्यौ मल मूत्र बिकारा ।
थूक रु लार परै मुख तै पुनि,
व्याधि बहै सब और हु द्वारा ।।
मांस को जीभ सौं खाइ सबै कछु,
ताहि तै ताकौ है कौन बिचारा ।
ऐसै शरीर मैं पैसि कै सुन्दर,
कैसैक कीजिये शुच्य अचारा ।।३।।

थूक रु लार भर्यौ मुख दीसत,
आखि मैं गीड रु नाक मैं सेढ़ौ ।
औरऊ द्वार मलीन रहै नित,
हाड के माँस के भीतर भेढौ ।।
ऐसै शरीर मैं बास कियौ तब,
एक से दीसत बामन ढेढौ ।
सुन्दर गर्व कहा इतने पर,
काहेकौ तूं नर चालत टेढौ ।।४।।

---

(३) शुच्य- शुद्ध ।

(४) भेढो-चर्बी, मज्जा । बामन-ब्राह्मण ।

जा दिन गर्भ सयोग भयौ जव,
ता दिन वून्द छिपाहुति ताँही ।
द्वादस मास अधो मुख भूलत,
वूडि रह्यौ पुनि वा रस माहि ॥
ता रज वीरज की यह देह सु,
तू अव चालत देखत छाही ।
सुन्दर गर्व गुमान कहा शठ,
आपुनि आदि बिचारत नाही ॥५॥

॥ इति देह मलिनता गर्व प्रहार को अग सम्पूर्ण ॥

---

(५) वीरज-वीर्य ।

अथ नारीनिंदा को अंग ॥१॥

मनहर छन्द

कामिनी कौ देह मानौ कहियें सघन बन,
उहा कोऊ जाइ सु तौ भूलिकै परतु है।
कुंजर है गति, कटि केहरि कौ भय जामैं,
बेनी काली नागनीऊ फन कौ धरतु है॥
कुच हैं पहार जहा काम चोर रहै तहा,
साधिकै कटाक्ष बान प्रान कौ हरतु है।
सुन्दर कहत एक और डर अति तामैं,
राक्षस बदन खाऊ खाऊ ही करतु है ॥१॥

बिष ही की भूमि माहि बिष के अंकुर भये,
नारी बिष बेलि बढी नख सिख देखिये।
विष ही के जर मूल बिष ही के डार पात,
बिष ही के फूल फल लागे जू बिसेखिये॥
विष के ततू पसारि उरझाये आंटौ मारि,
सब नरबृक्ष पर लपटी ही लेखिये।
सुन्दर कहत कोऊ सन्त तरु बचि गये,
तिनकं तौ कहु लता लागी नहिं पेखिये ॥२॥

---

(२) नरवृक्ष-पुरूप रूपी वृक्ष।

उदर मैं नग्क नरक अध द्वारनि मैं,
कुचन मैं नरक नरक भरी छाती है।
कंठ मै नरक गाल चिवुक नरक विंव,
मुख मैं नरक जीभ लार हू चुआती है ।।
नाक मैं नरक आंखि कान मैं नरक वहै,
हाथ पाव नख सिख नरक दिखाती है ।
सुन्दर कहत नारी नरक कौ कुण्ड यह,
नरक मै जाइ परै सो नरकपाती है ।।३।।
कामिनि कौ अंग अति मलिन महा अशुद्ध,
रोम रोम मलिन मलिन सब द्वार हैं ।
हाड मास मज्जा मेद चाम सौ लपेटि राखै,
ठौर ठौर रकत के भरेई भंडार है ।।
मूत्र ऊ पुरीष आंत एकमेक मिलि रही,
और ऊ उदर माहि बिबिध बिकार है ।
सुन्दर कहत नारी नख सिख निंद रूप,
ताहि जे सराहै ते तौ बडेई गवार है ।।४।।

---

(३) अध-नीचे के । कुच-स्तन । चिबुक-ठोडी । नरक पाती-नरक मे गिरने वाला ।

(४) पुरीष-मल, टट्टी । उदर-पेट ।

कुण्डलिया छंद

रसिकप्रिया रसमंजरी और सिंगार हि जानि ।
चतुराई करि बहुत विधि विषै बनाई आनि ॥
विषै बनाई आनि लगत विषयिन कौं प्यारी ।
जागै मदन प्रचंड सराहैं नख सिख नारी ॥
ज्यौं रोगी मिष्टांन्न खाइ रोगही विस्तारै ।
सुन्दर यह गति होइ जु तौ रसिकप्रिया धारै ॥५॥

रसिकप्रिया कै सुनत ही उपजै बहुत विकार ।
जो या माही चित्त दे वहै होत नर ख्वार ॥
वहै होत नर ख्वार वार तौ कछुक न लागै ।
सुनत विषय की वात लहरि विष ही की जागै ॥
ज्यौं कोइ ऊंघै हुतौ लही पुनि सेज बिछाई ।
सुन्दर ऐसी जानि सुनत रसिकप्रिया भाई ॥६॥

॥ इति नारीनिंदा को अंग सम्पूर्ण ॥

अथ दुष्ट को अंग ॥१०॥

मनहर छंद

आपनै न दोष देखै परके औगुन पेखै,
    दुष्ट कौ सुभाव उठि निंदा ई करतु है।
जैसै कोऊ महल सवारि राख्यौ नीकै करि,
    कीरी तहा जाइ छिद्र ढूढत फिरतु है॥
भोर ही तै साझ लग साझ ही तै भोर लग,
    सुन्दर कहत दिन ऐसै ही भरतु है।
पाव के तरे की आगि सूझै नही मूरिख कौ,
    और सौ कहत सिर ऊपर बरतु है॥१॥

इन्दव छंद

घात अनेक रहैं उर अतरि,
    दुष्ट कहै मुख सौ अति मीठी।
लोटत पोटत व्याघ्रही ज्यौ नित,
    ताकत है पुनि ताहि की पीठी॥
ऊपर तै छिरकै जल आनि सु,
    हेठ लगावत जारि अगीठी।
या महि कूर कछू मति जानहु,
    सुन्दर आपुनि आखिनि दीठी॥२॥

---

(२) घात-हानि करने का विचार। हेठ नीचे।

आपुन काज सवारन कै हित,
    और को काज बिगारत जाई ।
आपुनो कारज होइ न होइ,
    बुरो करि और को डारत भाई ॥
आपुहु खोवत और हु खोवत,
    खोइ दोऊ घर देत बहाई ।
सुन्दर देखत ही बनि आवत,
    दुष्ट करै नहि कौन बुराई ॥३॥

ज्यौं नर पोषत है निज देह हि,
    अन्न विनाश करै तिहि वारा ।
ज्यौं अहि और मनुष्य हि काटत,
    वाहि कछू नहि होइ अहारा ॥
ज्यौं पुनि पावक जारि सवै कछु,
    आपुहु नाश भयौ निरधारा ।
त्यौं यह सुन्दर दुष्ट सुभाव हि,
    जानि तजौ किन तीन प्रकारा ॥४॥

---

(३) हेठ-नीचे ।
(४) अहारा-भोजन ।

सर्प डसै सु नही कछु तालक,
वीछु लगै सु भलौ करि मानौ ।
सिंह हु खाइ तौ नाहि कछू डर,
जौ गज मारत तौ नहि हानौ ॥
आगि जरौ, जल बूडि मरौ,
गिरि जाइ गिरौ, कछु भै मति आनौ ।
सुन्दर और भले सब ही दुख,
दुर्जन सग भलौ जनि जानौ ॥५॥

॥ इति दुष्ट को अङ्ग सम्पूर्ण ॥

(५) तालक-ताल्लुक, चिता ।

।। अथ मन को अंग ।।११।।

मनहर छद

हटकि हटकि मन राखत जु छिन छिन,
सटकि सटकि चहु ओर अब जात है ।
लटकि लटकि ललचाइ लोल बार बार,
गटकि गटकि करि बिष फल खात है ।।
झटकि झटकि तार तोरत करम हीन,
भटकि भटकि कहु नैकु न अघात है ।
पटकि पटकि सिर सुन्दर जु मानी हारि,
फटकि फटकि जाइ सुधौ कौन बात है ।।१।।

पल ही मैं मरि जात पल ही मैं जीवत है,
पल ही मैं परहाथ देखत बिकानौ है ।
पल ही मैं फिरै नवखडहु ब्रह्माण्ड सब,
देख्यौ अनदेख्यौ सु तौ या तैं नहि छानौ है ।।
जातौ नहिं जानियत आवतौ न दीसै कछु,
ऐसी सी बलाइ अब तासौं पर्यौ पानौ है ।
सुन्दर कहत याकी गति नही जानी परै,
मन की प्रतीति कोऊ करै सु दिवानौ है ।।२।।

---

(१) हटकि-हठ करके । सटकि-झट से सरक कर । लटकि-उछलकर । लोल-चचल । झटकि-झटका देकर । तार-भगवान मे ध्यान का तार । (२) बलाइ-आफत ।

घेरिये तौ घेर्‌यौ हू न आवत है मेरौ पूत,
  जोई परमौधिये सु कान न धरतु है।
नीति न अनीति देखै शुभ न अशुभ पेखै,
  पल ही मैं हौती अनहोती हु करतु है॥
गुरुकी न साधू की न लोक वेद हू की शंक,
  काहू की न मानै न तौ काहू तै डरतु है।
सुन्दर कहत ताहि धीजिये सु कौन भांति,
  मन कौ सुभाव कछु कह्यौ न परतु है॥३॥

काम जब जागै तब गनत न कोऊ साख,
  जानै सब जोई करि देखत न माधी है।
क्रोध जब जागै तब नेकु न संभारि सकै,
  ऐसी बिधि मूल की अविद्या जिन साधी है॥
लोभ जब जागै तब त्रिपत न क्यौंही होइ,
  सुन्दर कहत इति ऐसे ही मै खाधी है।
मोह मतवारौ निश-दिन हि फिरत रहै,
  मन सौ न कोऊ हम देख्यौ अपराधी है॥४॥

देखिवे कौ दोरै तौ अटकि जाइ वाही ओर,
  सुनिवे कौ दोरै तौ रसिक सिरताज है।
सूंघवे कौ दोरै तौ अघाइ न सुगंध करि,
  खाइवे कौ दोरै तौ न धाप महाराज है॥

(४) साख-रिश्ता, सबन्ध। माधी-पाप बुद्धि।

भोग हू कौ दोरै तौ तृपत नही क्यौ ही होइ,
सुन्दर कहत याहि नैक हु न लाज है ।
काहू को कह्यौ न करै आपुनि ही टेक परै,
मन सौ न कोऊ हम जान्यौ दगाबाज है ॥५॥
देखै न कुठौर ठौर कहत और की और,
लीन जाइ होत हाड मास हू रकत मैं ।
करत बुराई सर औसर न जानै कछु,
धका आइ देत राम नाम सौ लगत मैं ॥
बाहे सुर असुर बहाये सब भेष जिन,
सुन्दर कहत दिन घालत भगति मै ।
और ऊ अनेक अन्तराय ही करत रहै,
मन सौ न कोऊ है अधम या जगत मैं ॥६॥
जिन ठगे शकर बिधाता इन्द्र देव मुनि,
आपनौ ऊ अधिपति ठग्यौ जिनि चन्द है ।
और योगी जगम सन्यासी सेख कौन गिनै,
सबही कौ ठगत, ठगावै न सुछद है ॥
तापस ऋषीश्वर सकल पचि पचि गये,
काहू कै न आवै हाथ ऐसौ या पै बद है ।
सुन्दर कहत बस कौन विधि कीजै ताहि,
मन सौ न कोऊ या जगत माहि रिन्द है ॥७॥

---

(६) अतराय-विघ्न बाधा । लीन-मगन ।

(७) अधिपति-स्वामी, यथा "चन्द्रमा मनो भूत्वा

रक कौ नचावै अभिलाषा धन पाइवै की

निस दिन सौचि करि ऐसैं ही पचतु है ।

राजा ही नचावै सब भूमि हू कौ राज लेव,

और ऊ नचावै जोई देह सौ रचतु है ॥

देवता असुर सिद्ध पनग सकल लोक,

कीट पसु पखी कहु कैसै कै बचतु है ।

सुन्दर कहत काहु सत की कही न जाइ,

मन कै नचाये सब जगत नचतु है ॥८॥

इन्दव छद

केतक द्यौस भये समुझावत,

नैकु न मानत है मन भौदू ।

भूलि रह्यौ विषिया सुख मैं,

कछु और न जानत है शठ दौदू ॥

आखि न कान न नाक बिना सिर,

हाथ न पाव नही मुख पौदू ।

सुन्दर ताहि गहै कोऊ क्यौ करि,

नीकसि जाइ बडौ मन लौदू ॥९॥

प्राविशत्" बद-दाव पेंच । रिंद-जिद शैतान ।

(८) अभिलाषा-इच्छा, लोभ लालच । पनग-पन्नग, सर्प ।

(९) भोदू-मूर्ख । दोदू-काम । पोदू पीठ । लोदू-बेढगा ।

दौरत है दस हू दिसि कौ शठ,
वायु लगी तब तैं भयौ बैंडा ।
लाज न काज कछू नहिं राखत,
सील सुभाव की फौरत मैंडा ॥
सुन्दर सीख कहा कहि देइ,
भिदै नहिं बान छिदै नहि गैंडा ।
लालच लागि गयौ मन बौखरि,
बारह बाट अठारह पंडा ॥१०॥

श्वान कहू कि शृगाल कहू कि,
बिडाल कहू मन की मति तैसी ।
ढेढ कहू किधौ डूम कहूं किधौं,
भाड कहू कि भडाइ दे जैसी ।
चौर कहू, वट मार कहू,
ठग जाइ कहूं, उपमा कहू कैसी ।
सुन्दर और कहा कहिये अब,
या मन की गति दौसत ऐसी ॥११॥

(१०-११) बैंडा-बाका टेढा। मैंडा-कार, सीमा, मर्यादा। गैंडा-गेंडे की तरह। श्वान-कुत्ता। शृगाल-गीदड। विडाल-बिलाव।

कै बर तू मन रक भयौ शठ,
    मागत भीख दसौं दिस डूल्यौ ।
कै बर तै मन छत्र धर्यौ सिर,
    कामिनि सग हिंडोरनि झूल्यौ ॥
कै बर तू मन छीन भयौ अति,
    कै बर तू सुख पाइक फूल्यौ ।
सुन्दर कै बर तोहि कह्यौ मन,
    कौन गली किहि मारग भूल्यौ ॥१२॥
इन्द्रिनि के सुख चाहत है मन,
    लालच लागि भ्रमैं शठ यौ ही ।
देखि मरीचि भर्यौ जल पूरन,
    धावत है मृग मूरिख ज्यौ ही ॥
प्रेत पिशाच निशाचर डोलत,
    भूख मरै नहि धापत क्यौ ही ।
वायु बघूर हिं कौन गहै कर,
    सुन्दर दौरत है मन त्यौ ही ॥१३॥
कौन सुभाव पर्यौ उठि दौरत,
    अमृत छाडि चचोरत हाडै ।
ज्यौ भ्रम की हथिनी दृग देखत,
    आतुर होइ परै गज खाडै ॥

---

(१४) चचोरत हाडै-हड्डी चूसता है। भ्रम की-नकली, बनावटी। राडै-रडवे की तरह। भ्रमवो-भटकता है।

सुन्दर तोहि सदा समुझावत,
एक हु सीख लगै नहि राडे ।
बादि वृथा भटकै निस वासर,
रे मन ! तूं भ्रमबौ किन छाडे ॥१७॥

व्है सब कौ सिरमौर ततक्षिन,
जौ अभि अन्तरि ज्ञान विचारै ।
जौ कछु और विषै सुख वंछत,
तौ यह देह अमोलिक हारै ॥
छाडि कुबुद्धि भजै भगवंत हि,
आपु तिरै पुनि और हि तारै ।
सुन्दर तोहि कह्यौ कितनी बर,
तू मन क्यौ नहि आपु सभारै ॥१८॥

जौ मन नारि की ओर निहारत,
तौ मन होत है ताहि कौ रूपा ।
जौ मन काहु सौं क्रोध करै जब,
क्रोधमई हो जाइ तद्रूपा ॥
जौ मन माया ही माया रटै नित,
तौ मन डूबत माया के कूपा ।
सुन्दर जौ मन ब्रह्म विचारत,
तौ मन होत है ब्रह्मस्वरूपा ॥१९॥

मनहर छद

कवहू कै हसि उठै कवहू कै रोइ देत,
कवहु वकत कहू अत हू न लहियै ।
कवहू क खाइ तौ अघाइ नहि काहू करि,
कवहू क कहै मेरै कछु नहि चहियै ॥
कवहू आकाश जाइ कवहू पाताल जाइ,
सुन्दर कहत ताहि कैसे करि गहियै ।
कबहू क आइ लागै कवहू उतरि भागै,
भूत के से चिन्ह करै ऐसौ मन कहियै ॥१७॥

कबहू तौ पाख कौ परेवा कै दिखावै मन,
कवहू क धूरि के चावरि करि लेत है ।
कबहू तौ गोटिका उछारत आकास ओर,
कवहूक राते पीरे रग श्याम शेत है ॥
कबहू तौ आब कौ उगाइ करि ठाडौ करै,
कबहू तौ शीस धर जुदे कर देत है ।
बाजीगर कौ सौ ख्याल सुन्दर करत मन,
सदाई भ्रमत रहै ऐसौ कोऊ प्रेत है ॥१८॥

---

(१८) परेबा-पक्षी । चौररि-चावल । गोटिका-गोली । शीस धर जुदे-शिर को धड से अलग ।

कबहूंक साध होत कबहूक चोर होत,
कबहूक राजा होत कबहूक रंक सौ।
कबहूक दीन होत कबहू गुमानी होत,
कबहूंक सूधौ होत कबहूंक बंक सौ॥
कबहूक कांमी होत कबहूक जती होत,
कबहूंक निर्मल होत कबहूंक पंक सौ।
मन कौ स्वरूप ऐसौ सुन्दर फटिक जैसौ,
कबहूक सूर होत कबहूं मयंक सौ॥१९॥
हाथीकौ सौ कान किधौ पीपर कौ पान किधौ,
ध्वजा कौ उडान कहु थिर न रहतु है।
पानी कौ सौ घेरि किधौ पौन उरझेर किधौ,
चक्र कौ सौ फेरि कौऊ कैसे कै गहतु है॥
अरहट माल किधौ चरखा कौ ख्याल किधौ,
फेरि खात बाल कछु सुधि न लहतु है।
धूमकौ सौ धाव ताकौ राखिबे कौ चाव ऐसौ,
मन कौ सुभाव सु तौ सुन्दर कहतु है॥२०॥

---

(१९) गुमानी-अभिमानी, घमडी। जती-साधु। पंक-कीचड। सूर-सूर्य सा गर्म। मयंक-चंद्रमा सा ठंडा।

(२०) घेर-चक्कर, भंवर। पौन उरझेर-हवा का चक्कर, भभूका। धूम को धाव-धुआ उडान।

सुख मानै दुख मानै सम्पति विपति मानै,
हर्ष मानै शोक मानै मानै रक धन है ।
घटि मानै वढि मानै शुभ हू अशुभ मानै,
लाभ मानै हानि मानै याहि तै कृपन है ॥
पाप मानै पुन्य मानै उत्तम मध्यम मानै,
नीच मानै ऊच मानै मानै मेरी तन है ।
सुरग नरक मानै वध मानै मोक्ष मानै,
सुन्दर सकल मानै तातै नाम मन है ॥२१॥

जोई जोई देषै कछु सोई सोई मन आहि,
जोई जोई सुनै सोई मन ही को भ्रम है ।
जोई जोई सूघै जोई खाई जौ सपर्श होइ,
जोई जोई करै सोई मन ही कौ क्रम है ॥
ज ई जोई ग्रहै जोई त्यागै जोई अनुरागै,
जहां जहां जाइ सोई मन ही कौ श्रम है ।
जोई जोई कहै सोई सुन्दर सकल मन,
जोई जोई कलपै सु मन ही कौ भ्रम है ॥२२॥
एक ही विटप विश्व ज्यौ को त्यौ ही देखियत,
अति ही सघन ताके पत्र फल फूल है ।

(२२) श्रम दम, काम । भ्रम धर्म, गुण, स्वभाव ।

आगिले झरत पात नये नये होत जात,
ऐसौ याही तरु कौ अनादि काल मूल है ॥
दश च्यारि लोक लौ पसरि जहा तहा रह्यौ,
अध पुनि ऊरध सूखिम अरु थूल है ।
कोऊ तौ कहत सत्य कोऊ तौ कहै असत्य,
सुन्दर सकल मत ही कौ भ्रम भूल है ॥२३॥
तौ सो न कपूत कोऊ कतहूं न देखियत,
तौ सो न सपूत कोऊ देखियत और है ।
तूं ही आप भूलि महा नीच हूं तें नीच होइ,
तूं ही आपु जाते तें सकल शिरमोर है ॥
तू ही आपु भ्रमै तब भ्रमत जगत देखै,
तेरे थिर भये सब ठौर ही कौ ठौर है ।
तूं ही जीव रूप तू ही ब्रह्म है अकाशवत,
सुन्दर कहत मन तेरी सब दौर है ॥२४॥
मन ही कै भ्रम तै जगत यह देखियत,
मन ही कौ भ्रम गयौ जगत विलात है ।
मन ही कै भ्रम जेवरी मैं उपजत साप,
मन कै विचारे साप जेवरी समात है ॥

(२३) विटप-वृक्ष । दश-च्यार-चौदह ।

मन ही कै भ्रम तै मरीचिका कौ जल कहैं,
मन ही कै भ्रम सीपि रूपौ सो दिखात है ।
सुन्दर सकल यह दीसै मन ही कौ भ्रम,
मन ही कौ भ्रम गयै ब्रह्म होइ जात है ।।२५।।

मन ही जगत रूप होइ करि विसतर्यौ,
मन ही अलख रूप जगत सौ न्यारौ है ।
मन ही सकल घट व्यापक अखड एक,
मन ही सकल यह जगत पियारौ है ।।
मन ही आकाशवत हाथ न परत कछु,
मन के न रूप रेख बृद्ध ही न वारौ है ।
सुन्दर कहत परमारथ बिचारै जब,
मन मिटि जाइ एक ब्रह्म निज सारौ है ।।२६।।

।। इति मन को अग सम्पूर्ण ।।

(२५) मरीचिका-मृगतृष्णा । रूपो-चादी ।

अथ चांनक को अंग ।।१२।।

मनहर छंद

जोई जोई छूटिबे कौं करत उपाइ अज्ञ,
सोई सोई दिढ करि बधन परतु है ।
जोग जज्ञ जप तप तीरथ ब्रतादि और,
झपापात लेत जाइ हिंमारैं गरतु है ।।
कानऊ फराइ पुनि कैसऊ लुचाई अग,
बिभूति लगाइ सिर जटाऊ धरतु है ।
बिनु ज्ञान पाये नहि छूटत हृदै की ग्रन्थि,
सुन्दर कहत यौं ही भ्रमि कै मरतु है ।।१।।

निर्मात्रिक छंद

जप तप करत धरत ब्रत जत सत,
मन बच क्रम भ्रम कषट सहत तन ।
वलकल बसन अशन फल पत्र जल,
कसत रसन रस तजत बसत वन ।।
जरत मरत नर गरत परत सर,
कहत लहत हय गय दल वल धन ।
पचत पचत भव भय न टरत शठ,
घट घट प्रगट रहत न लखत जन ।।२।।

---

(१) दिढ-दृढ, मजबूत । झपापात-पहाड की चट्टान से गिरना । हिमारैं-हिमालय । ग्रन्थि-गाठ, घुण्डी ।

(२) बालकल-वल्कल, छाल । वसन-वस्त्र । अशन-भोजन । रसन-जीभ । हय-घोडे । गय-गज । कपट-कष्ट ।

जोग करै जज्ञ करै, वेद विधि त्याग करै,
  जप करै तप करै यू ही आयु खूटि है ।
यम करै नेम करै तीरथ ऊ व्रत करै,
  पुहमि अटन करै वृथा श्वास टूटि है ॥
जीवे को जतन करै मन मैं बासना धरै,
  पचि पचि यौ ही मरै काल सिर कूटि है ।
औरऊ अनेक बिधि कोटिक उपाइ करैं,
  सुन्दर कहत बिनु ज्ञान नहिं छूटि है ॥३॥

बुधि करि हीन रज तम गुन छाइ रह्यौ,
  बन बन फिरत उदास होइ घरतै ।
कठिन तपस्या धरि मेघ शीत घाम सहै,
  कद मूल खाइ कोऊ कामना के डरतै ॥
अति ही अज्ञान और बिविध उपाइ करै,
  निज रूप भूलि करि बधै जाइ परतै ।
सुन्दर कहत मूधी ओर दिस देखै मुख,
  हाथ- माहि आरसी न- फेरै मूढ करतै ॥४॥

---

(३) पुहमि-पृथ्वी पर । अटन-भ्रमण, तीर्थयात्रा ।

(४) मूधी-उलटी । आरसी-दर्पण, काच ।

मेघ सहै शीत कहै शीश पर घाम सहै,
 कठिन तपस्या करि कद मूल खात है ।
जोग करै जज्ञ करै तीरथ ऊ व्रत करै,
 पुनि नाना विधि करै मन मैं सिहात है ॥
और देवी देवता उपासना अनेक करै,
 आमनि की हौंम कैसे आकडोडे जात है ।
सुन्दर कहत एक रवि के प्रकाश बिन,
 जैगनै की ज्योति कहा रजनी विलात है ॥५॥

आप ही कै घट मैं प्रगट परमेश्वर है,
 ताहि छोडि भूलै नर दूर दूर जात है ।
कोई दोरै द्वारिका कौ कोई काशी जगनाथ,
 कोई दोरै मथुरा कौ हरिद्वार न्हात है ॥
कोई दोरै वद्रीनाथ विषम पहाड चढि,
 कोई तो केदार जात मन मैं सिहात है ।
सुन्दर कहत गुरुदेव देहि दिव्य नैन,
 दूरि ही कै दूरवीन निकट दिखात है ॥६॥

---

(५) हौंस-इच्छा । अकडोडे-आकडे का डोडा । जैगने की जोति-जुगनू की चमक ।

(६) सिहात है-अहकार करता है । विषम-कठिन ।

(७) आधरैनि-अ धोने ।

कोऊ फिरै नागै पाइ कोऊ गूदरी बनाइ,
देह की दशा दिखाइ आइ लोक लूट्यो है ।
कोऊ दूधाहारी होइ कोऊ फलहारी होइ,
कोऊ अधोमुख झूलि झूलि धूम घूट्यो है ॥
कोऊ नहि खाहि लोन कोऊ मुख गहै मौन,
सुन्दर कहत यों ही वृथा भुस कूट्यो है ।
प्रभुसों न प्रीति माहि, ज्ञानसों परचै नाहि,
देखो भाई आधरैनि ज्यों बाजार लूट्यो है ॥७॥

इन्दव छंद

आसन मारि सवारि जटा नख,
उज्जल अंग विभूति चढ़ाई ।
या हमकों कछु देइ ,दया करि,
घेरि रहै बहु लोग लुगाई ॥
कोउक उत्तम भोजन ल्यावत,
कोउक ल्यावत पान मिठाई ।
सुन्दर लै करि जान भयौ सब,
मूरख लोगन या सिधि पाई ॥८॥
ऊरध पाइ अधोमुख ह्वै करि,
घु टत घूमहि देह झुलावै ।
मेघहु शीतहु घाम सहै सिर,
तीनहु काल महा दुख पावै ॥
हाथ कछू न परै कबहू कन,
मूरिख कूकस कूटि उडावै ।

सुन्दर बछि बिषै सुख कौं घर,
बूडत है अरु झाझन गावै ॥९॥
ग्रेह तज्यौ अरु नेक तज्यौ पुनि,
खेह लगाइ कै देह सवारी ।
मेघ सहै सिर शीत सह्यौ तनु,
धूप सहै जु पचागनि बारी ॥
भूख सही रहै रूख तरै परि,
सुन्दर दास सहै दुख भारी ।
डासन छाडि कै कासन ऊपरि,
आसन मार्यौ पै आश न मारी ॥१०॥
जौ कोउ कष्ट करै बहुभातिनि,
जात अज्ञान नही मन केरौ ।
ज्यौ तम पूरि रह्यौ घर भीतर,
कैसेहु दूर न होत अधेरौ ॥
लाठिनि मारिये ठेलि निकारिये,
और उपाइ करै बहुतेरौ ।
सुन्दर सूर प्रकाश भयौ तब,
तौ कतहू नहिं देखिये नेरौ ॥११॥

(९) ऊरध-ऊपर । पाइ पैर । घुटत घूमहि-धुए मे घुटते हैं ।

(१०) ग्रेह-घर । खेह-भस्मी । पचागनि-पचाग्नि । रुख-वृक्ष । डासन-बिछोना । कासन-घास की चटाई ।

धार वह्यौ खग धार हयौ,
जल धार सह्यौ गिरिधार गिर्‌यौ है ।
भार सच्यौ धन भारथ ह्व करि,
भार लयौ सिर भार पर्‌यौ है ॥
मार तप्यौ बहि मार गयौ,
जम मार दई मन तौ न मर्‌यौ है ।
सार तज्यौ खुट सार पढ्यौ,
कहि सुन्दर कारिज कौन सर्‌यौ है ॥१२॥

कोउ भया पय पान करै नित,
कोउक खात है अन्न अलौना ।
कोउक कष्ट करै निशवासर,
कोउक बैठि कै साधत पौना ॥
कोऊक बाद बिवाद करै अति,
कोउक धारि रहै मुख मौना ।
सुन्दर एक अज्ञान गये बिनु,
सिद्ध भयौ नहिं दीसत कौना ॥१३॥

---

(१२) खग-खड्ग, तलवार। भारथ हूकार-वैल की तरह पचरकर। खुट-खोटा ।

कोउक अंग बिभूति लगावत,
कोउक होत निराट दिगम्बर ।
कोउक श्वेत कषाइक औढत,
कोउक काथ रगै बहु अम्बर ।।
कोउक बलकल शीश जटा नख,
कोउक औढत है जु बघबर ।
सुन्दर एक अज्ञान गये विनु,
ये सब दीसत आहि अडबर ।।१४।।

कोउक जात पिराग बनारस,
कोउ गया जगनाथ ही धावै ।
को मथुरा बदरी हरिद्वार सु,
कोउ भया कुरुखेत हि न्हावै ।।
कोउक पुष्कर व्है पच तीरथ,
दोरैंइ दोरैं जु द्वारका आवै ।
सुन्दर बित्त गड्यौ घर माहि सु,
वाहिर ढूढत क्यौ करि पावै ।।१५।।

आगै कछू नहि हाथ पर्यौ पुनि,
पीछै विगारि गये निज भौना ।
ज्यौ कोऊ कामिनि कत हि मारि,
चली सग और हि देखि सलौना ।।

---

(१५) पिराग-प्रयाग । वित्त-धन ।

सोऊ गयौ तजिकै ततकाल,
कहै न बनै जु रही मुख मौना ।
तैसै हि सुन्दर ज्ञान बिना सब,
छाडि भये नर भाड कै दौना ॥१६॥
ज्यौ कोउ कोस कट्यौ नही मारग,
तेलकले घर मैं पशु जोये ।
ज्यौ वनिया गयौ बीस कै तीस कौ,
बीस हु मै दमहू नहिं होये ॥
ज्यौ कोउ चौबे छब्बे कौं चल्यौ पुनि,
होइ दुबे दुई गाठ के खोये ।
तैस हि सुन्दर और क्रिया सब,
राम बिना निहचै नर रोये ॥१७॥
जो कोउ राम बिना नर मूरिख,
औरन के गुन जीभ भनैगी ।
आनि क्रिया गढते गडवा पुनि,
होत है भेरि कछू न बनैगी ॥
ज्यौ हथफेरि दिखावत चावर,
अन्त तौ धूरि की धूरि छनैगी ।
सुन्दर भूल भई अतिसै करि,
सूते की भैस पाडा ई जनैगी ॥१८॥

---

(१६) सलोना-सुन्दर। कत-अपना पति।
(१७) तेलकले-तेल निकालने की घाणी, कोल्हू।

होइ उदास बिचार बिना नर,
गेह तज्यौ बन जाइ रह्यौ है ।
अम्बर छाडि बघवर लै करि,
कै तप कौ तन कष्ट सह्यौ है ॥
आसन मारि शवासन व्है,
मुख मौन गही, मन तौ न गह्यौ है ।
सुन्दर कौन कुबुद्धि लगी कहि,
या भवसागर माँहि वह्यौ है ॥१९॥

भेष धर्यौ पर भेद न जानत,
भेद लहे बिनु खेद ही पैहै ।
भूख हा मारत नीद निवारत,
अन तजे फल पत्रनि खैहै ॥
और उपाइ अनेक करै पुनि,
ताहि तै हाथ कछू नहीं ऐहै ।
या नर देह वृथा शठ खोवत,
सुन्दर राम बिना पछितैहै ॥२०॥

आपुने आपुने थान मुकाम,
सराहन कौ सब बात भली है ।
यज्ञ व्रतादिक तीरथ दान,
पुरान कथा जु अनेक चली है ॥
कोटिक और उपाइ जहा लग,
ते सुनि कै नर बुद्धि छली है ।

सुन्दर ज्ञान विना न कहू मुख,
भूलनि की वहु भाति गली है ॥२१॥
कोउक चाहत पुत्र धनादिक,
कोउक चाहत वाझ जनायौ ।
कोऊक चाहत धात रसायन,
कोउक चाहत पारद खायौ ॥
कौउक चाहत जत्रनि मत्रनि,
कोउक चाहत रोग गमायौ ।
सुन्दर राम विना सव ही भ्रम,
देखहु या जग यौं डहकायौ ॥२२॥
काहे कौ तू नर भेख वनावत,
काहे कौ तू दस हू दिसि डूलै ।
काहे कौ तू तन कष्ट करै अति,
काहे कौ तू मुख तै कहि फूलै ॥
काहे कौ और उपाइ करै अब,
आन क्रिया करिकै मति भूलै ।
सुन्दर एक भजै भगवत हि,
तौ सुखसागर मैं नित झूलै ॥२३॥

॥ इति चांनक को अंग ॥

अथ बिपरीत ज्ञांनी को अंग ।।१३।।

मनहर छंद

'एक ब्रह्म' मुख मौ वनाइ करि कहत है,
　　अतहकरन तौ बिकारनि सौ भर्यौ है ।
जैमै ठग गोब्रर सौ कूपौ भरि राखत है,
　　सेर पाच घृत लै कै ऊपर ज्यौ कर्यौ है ।।
जैसै कोऊ भाडे माँहि प्याज कौ छिपाइ राखे,
　　चीथरा कपूर कौ लै मुख बाधि धर्यौ है ।
सुन्दर कहत ऐसै ज्ञानी है जगत माहि,
　　तिनकौ तौ देखि करि मेरौ मन डर्यौ है ।।१।।

देह सौ ममत्त पुनि गेह सौ ममत्त सुत,
　　दारा सौ ममत्त मन माया मैं रहतु है ।
थिरता न लहै जैमै कदुक चौगान माहि,
　　कर्मनि कै वसि मार्यौ धका कौ बहतु है ।।
अतहकरन मु तौ जगत सौ रुचि रह्यौ,
　　मुख सौ बनाइ बात ब्रह्म की कहतु है ।
सुन्दर अधिक मोही याही तै अचंभौ आहि,
　　भूमि पर पर्यौ कोऊ चन्द कौ गहतु है ।।२।।
मुख सौ कहत ज्ञान, भ्रमै मन इन्द्रिय प्रान,
　　मारग कै जल मै न प्रतिबिंब लहिये ।

गाठि मे न पैका कोऊ भयौ रहै साहूकार,
बातनि ही मुहर रुपैया गिनि गहिये ।।
सुपने मैं पचामृत जीमि कै तृपति भयौ,
जागै तै मरत भूख खाइबे कौ चहिये ।
सुन्दर सुभट जैसै काइर मारत गाल,
राजा भोज सम कहा गगौ तेली कहिये ।।३।।
ससार के सुखनि सौ आसक्त अनेक विधि,
इन्द्रिय हू लोलुप मन कबहू न गह्यौ है ।
कहत है ऐसै मै तो एक ब्रह्म जानत हू,
ताहि तै छोडी कै शुभ कर्मन कौ रह्यौ है ।।
ब्रह्म की न प्राप्ति पुनि कर्म सब छूटि गये,
दहु न तै भ्रष्ट होइ अधबिच वह्यौ है ।
सुन्दर कहत ताहि त्यागिये श्वपच जैसे,
याही भाति ग्रन्थ मै वसिष्ठजी हू कह्यौ है ।।४।।
ज्ञान की सी बात कहै मन तौ मलीन रहै,
वासना अनेक भरी नैकु न निवारि है ।
जैसै कऊ आभूषन अधिक बनाइ राख्यौ,
कलई ऊपरि करि भीतरि भगारि है ।।
ज्यौही मन आवै त्यौही खेलत निसक होइ,
ज्ञान सुनि सीख लयौ ग्रथनि बिचारि है ।
सुन्दर कहत वाकै अटक न कऊ आहि,
जोई वासौ मिलै जाइ ताहि कौ बिगारि है ।।५।।

हंस श्वेत बक श्वेत देखिये समान दोऊ,
हंस मोती चुगै बक मछरी को खात है।
पिक अरु काक दोऊ कैसें करि जाने जाहि,
पिक अब डार काक करक हि जात है॥
सिंधौ अरु फटक पखान सम देखियत,
वह तो कठोर वह जल मैं समात है।
सुन्दर कहत ज्ञानी बाहिर भीतर शुद्ध,
ताकी पटतर और बातनि की बात है॥६॥

॥ इति विपरीत ज्ञानी को अंग सम्पूर्ण ॥

---

(१) कूपो-घड़ा, कलशा।
(४) श्वपच-चाण्डाल।
(६) पटतर-समान।

अथ वचन विवेक कौ अंग ॥१४॥

जाकै घर ताजी तुरकीन कौ तबेला बंध्यौ,
ताकै आगैं फेरि फेरि टटुवा नचाइये।
जाकै नाना मत मन सिगा गाफ दर धर,
ताकै आगैं आनि करि नोरि ई नचाइये॥
जाकौ पनासुन गान गान सब दिन बीते,
सुन्दर कहत ताहि रागनी सुनाइये।
चतुर प्रवीन आगैं मूरख उचार करै,
सूरज कै आगैं जैसे जैगना दिखाइये॥१॥

एक बानी रूपवंत भूषन बसन अंग,
अधिक विराजमान कहियत ऐसी है।
एक बानी फाटे टूटे अम्बर उढाये आनि
ताह माहिं बिपरीत सुनियत तैसी है॥
एक बानी मतक ही बहुत सिगार किये
लोकनि कौ नीकी लगै संतनि कौ भंगी है।
सुन्दर कहत बानी त्रिविध जगत माँहि
जानै कोऊ चतुर प्रवीन जाकै जैसी है॥२॥

राजा कौ कुंवर जी सुरूप कै कुरूप होइ,
ताकौ तसलीम करि गोद लै खिलाइये॥
और काहू रैनि कै सुरूप होइ सोभनीक,
ताहू कौ तौ देखि करि निकट बुलाइये॥

काहू कै कुरूप कारौ कूवरौ व्है अगहीन,
वाकी और देखि देखि माथौ ई हलाइये ।
सुन्दर कहत वाके बाप ही कौ प्यारौ लागै,
यौ ही जानि बानी कौ विवेक ऐसै पाइये ।।३।।

बोलिये तौ तव जब वोलिवे की सुधि होइ,
न तौ मुख मौन गहि चुप होइ रहिये ।
जोरिये ऊ तव जव जोरिबो ऊ जानि परै,
तुक छद अरथ अनूप जामैं लहिये ।।
गाइये ऊ तव जव गाइवे कौ कठ होइ,
श्रवन के सुनत हो मन जाइ गहिये ।
तुक भग छद भग अरथ मिलै न कछु,
सुन्दर कहत ऐसी वानी नही कहिये ।।४।।

एकनि के बचन सुनत अति सुख होइ,
फूल से झरत है अधिक मन भावने ।
एकनि के बचन अशम मानौ वरषत,
श्रवन के सुनत लगत अलखावने ।।
एकनि के वचन कटक कटु बिष रूप,
करत मरम छेद दुख उपजावने ।
सुन्दर कहत घट घट मैं वचन भेद,
उत्तम मधिम और अधम सुनावने ।।५।।

काक अरु रासभ उलूक जब बोलत हैं,
    तिनके तौ वचन सुहात कहि कौन कौं ।
कोकिला रु सारौ पुनि सुवा जब बोलत हैं,
    सब कोऊ कान दै सुनत रव रौन कौं ।।
ताहि तें सुवचन विवेक करि बोलियत,
    यौंहि आक बाक बकि तोरियै न पौन कौं ।
सुन्दर समुझि कैं वचन कौ उचार करि,
    नाहिं तर चुप ह्वै पकरि बैठि मौन कौं ।।६।।

प्रथम हियें बिचारि, ढीम सौ न दीजै डारि,
    ताहि तें सुवचन सभारि करि बोलियै ।
जाने न कुहेत हेत भावै तैसी वहि देत
    कहियै तौ तब जब मन माहि तोलियै ।।
सबही कौ लागै दुख कोऊ नहि पावै सुख,
    बोलिकै वृथा ही तान छानी नही छोलियै ।
सुन्दर समुझि करि कहियै सरस बात,
    तब ही तौ बदन कपाट गहि खोलियै ।।७।।
        वचन ऐसे बोलत है पसु जैसे,
    तिनके तो वोलिवे मैं ढग हू न एक है ।
कोऊ राति दिवस बकत ही रहत ऐसे,
    जैसी विधि कूप मैं बकत मानो भेक है ।।

बिबिध प्रकार करि बोलत जगत सब,
घट घट मुख मख वचन अनैक है ।
सुन्दर कहत तातै वचन बिचारि लेहु,
बचन तौ उहै जामै पाइये बिवेक है ॥८॥

जैसे हस नीर कौ तजत है असार जानि,
सार जानि क्षीर कौं निरालौ करि पीजिये ।
जैसै दधि मथत मथत काढि लेत घृत,
और रही पही सब छाछि छाडि दीजिये ॥
जैसै मधु मक्षिका, सुवास कौ भ्रमर लेत,
तैसै ही बिचारि करि भिन्न भिन्नकी जिये ।
सुन्दर कहत तातै वचन अनेक भाँति,
वचन मैं बचन विवेक करि लीजिये ॥९॥

प्रथम ही गुरुदेव मुख तै उचार कर्यौ,
वैई तौ बचन आइ लगे निज हीये हैं ।
तिनकौ बिवेक करि अन्तहकरन माहि,
अति ही अमोल नग भिन्न भिन्न कीये हैं ॥
आपु कौ दरिद्र गयौ पर उपकार हेत,
नग हि निगल कै उगलि नग दीये हैं ।
सुन्दर कहत यह वानो यौं प्रगट भई,
और कोऊ सुनि करि रक जीव जीये है ॥१०॥

वचन तैं दूरि मिलै वचन विरोध होइ,
वचन तैं राग बढ़ै, वचन तैं दोष जू ।
वचन तैं ज्वाला उठै, वचन सीतल होइ,
वचन तैं मुदित, वचन ही तैं रोष जू ॥
वचन तैं प्यारो लगै, वचन तैं दूरि भगै,
वचन तैं मुरझाइ वचन तैं पोष जू ।
सुन्दर कहत यह वचन कौ भेद ऐसौ,
वचन तैं बंध होइ, वचन तैं मोक्ष जू ॥११॥

वचन तैं गुरु सिष बाप पूत प्यारो होइ,
वचन तैं बहु विधि होत उतपात है ।
वचन तैं नारी अरु पुरुष सनेह अति,
वचन तैं दोऊ आपु आपु मैं रिसात है ।
वचन तैं सब आइ राजा के हजूरि होहिं.
वचन तैं चाकर ऊ छोड़ि कै परात है ।
सुन्दर सुवचन सुनत अति सुख होइ,
कुवचन सुनत ही प्रीति घटि जात है ॥१२॥
एक तौ वचन सुनि कर्म ही मैं वहि जाहि,
करत बहुत विधि सुरग की उमेद है ।
एक है वचन दिढ ईश्वर उपासना कै,
तिनमैं तौ सकल ही वासना कौ छेद है ॥

एक है बचन तामैं एक ही अखंड ब्रह्म,
सुन्दर कहत यौ बतायौ अंत वेद है ।
वचन अनेक ही प्रकार सब देखियत,
वचन विबेक किये बचन मै भेद है ॥१३॥

बचन तै जोग करै, बचन तै जज्ञ करै,
बचन तै तप करि देह कौ दहतु है ।
बचन तै बंधन करत है अनेक बिधि,
बचन तै त्याग करि बन मैं रहतु है ॥
वचन तै उरझि रु सुरझै बचन ही तै,
वचन तै भांति भांति संकट सहतु है,
बचन तै जीव भयौ बचन तै ब्रह्म होइ,
सुन्दर बचन भेद बेद यौ कहतु है ॥१४॥

॥ इति बचन विवेक को अंग सम्पूर्ण ॥

---

(१) ताजी-अरबी । तुरकीन-घोडा ।

(५) अशम-अश्म, पत्थर ।

(६) रासभ-गधा । सारी-सारिका, मैना । रव-शब्द । रौन-रमणीय, सुन्दर । पौन-प्राणवायु ।

अथ निर्गुण उपासना को अंग ॥१५॥

इन्दव छंद

ब्रह्म कुलाल रचै बहु भाजन,
    कर्मनि कै बसि मोहि न भावै ।
विष्णु हु मकट आइ गहे तन,
    काहू कौ रक्षक काहू सतावै ॥
शंकर भूत पिशाचनि के पति,
    पानि कपाल लिये बिललावै ।
याहि तें सुन्दर निरगुन त्याग सु,
    निर्मल एक निरंजन ध्यावै ॥१॥

कोटिक बात बनाइ कहै कहा,
    होत भया सब ही मन रंजन ।
शास्तर समृति वेद पुरान,
    बखानत है अतिशै लुक अंजन ॥
पानी मैं बूडत पानी गहै कत,
    पार पहूचत है मति भंजन ।
सुन्दर तौ लग आंधेकी जेवरी,
    जौलौं न ध्याइ है एक निरंजन ॥२॥

---

(१) कुलाल-कुम्हार की तरह । भाजन-बर्तन । पानि-पाणि, हाथ मे । (२) मति भजन मदमति मूर्ख ।

मजन सो जु मनोमल मजन,
सज्जन सो जु कहै गति गुझ्झै ।
गजन सो जु इन्द्रिय गहि गजत,
रजन सो जु बुझावै अबुझ्झै ।।
भजन सो जु भर्यौ रस माहि,
बिदुज्जन सो कतहू न अरुझ्झै ।
व्यजन सो जु बढै रुचि सुन्दर,
अजन सो जु निरजन सुझ्झै ।।३।।
जा प्रभु तैं उतपत्ति भई यह,
सो प्रभु है उर इष्ट हमारै ।
जो प्रभु है सबकै सिर ऊपरि,
ता प्रभु कौ हम हू सिर धारै ।।
रूप न रेख अलेख अखडित,
भिन्न रहै सब कारिज सारे ।
नाम निरजन है तिनकौ पुनि,
सुन्दर ता प्रभु कै बलिहारै ।।४।।
जो उपजै बिनसै गुन धारत,
सो यह जानहु अजन माया ।
आवै न जाइ मरै नहि जीवत,
अच्युत एक निरजन राया ।।
ज्यौ तरु तत्त रहै रस एक हि,
आवत जात फिरै यह छाया ।

सो परब्रह्म सदा सिर ऊपरि,
सुन्दर ता प्रभु सौं मन लाया ॥५॥

जो उपज्यौ कछु आइ जहा लग,
सो सब नाश निरन्तर होई ।
रूप धर्यौ सु रहै नहिं निश्चल,
तीनौं लोक गनै कहा कोई ॥
राजस तामस सात्विक जो गुन,
देखत काल ग्रसै पुनि सोई ।
आपु हि एक रहै जु निरंजन,
सुन्दर के मन मानत सोई ॥६॥

देवनि कै सिर देव विराजत,
ईश्वर कै सिर ईश्वर कहिये ।
लालनि कै सिर लाल निरंतर,
सूरन कै सिर सूर सु लहिये ॥
पाकनि कै सिर पाक शिरोमणि,
देखि विचारि उहै दिढ़ गहिये ।
सुन्दर एक सदा सिर ऊपरि,
और कछू हमकौ नहिं चहिये ॥७॥

शेष महेश गनेश जहा लग,
विष्णु विरचिहु कै सिर स्वामी ।

व्यापक ब्रह्म अखंड अनावृत,
बाहरि भीतरि अन्तरयामी ।।
ओर न छोर अनत कहै गुन,
याहि तैं सुन्दर है घन नामी ।
ऐसो प्रभू जिनकै सिर ऊपरि,
क्यौं परि है तिनकौ कहि खांमी ।।८।।

।। इति निर्गुण उपासना को अंग सम्पूर्ण ।।

(६) गुज्झे-गुप्त बात । अबुज्झे-अबोध्य । बिदुज्जन-विद्वान् । अरुज्झे-उलझी बात । सुज्झे-सूझे, दीखे ।

(७) पाक-पवित्र । लाल-प्रिय ।

(८) अनावृत अपरिच्छिन्न, असीम । विरचि-ब्रह्माजी ।

अथ पतिव्रता को अंग ॥१६॥

इन्दव छंद

आन की ओर निहारत ही डगे,
    जात पतिव्रत एक धनी कौ ।
होत अनादर ऐसी हि भांति जु,
    पीछै फिरै पुनि शूर मनी कौ ॥
बैनहि मैं हरखो कहै जान,
    गिरै अध बिंद ज्यौं जोग जती कौ ।
राम हृदै तैं गये जन सुन्दर,
    एक रती बिन एक रती कौ ॥१॥

जो हरि कौ तजि आन उपासत,
    सो मतिमंद फजीहति होई ।
ज्यौं अपने भरतार हि छाडि,
    भई विभचारिनि कामिनि कोई ॥
सुन्दर ताहि न आदर मान,
    फिरै विमुखी अपनी पत खोई ।
बूडि मरै किनि कूप मझारि,
    कहा जग जीवत है शठ सोई ॥२॥

---

(१) डग्या-पतित । धिसं-गिरन से ।

(२) भरतार-भर्ता पति । पत-इज्जत ।

एक सही सबकै उरि अन्तर,
ता प्रभु को कहि काहे न गावै ।
संकट माहि सहाइ करै पुनि,
सो अपनौ पति क्यौं बिसरावै ॥
चारि पदारथ और जहां लग,
आठहु सिद्धि नवै निधि पावै ।
सुन्दर छारि परौ तिनकै मुख,
जो हरि कौ तजि आनहि ध्यावै ॥३॥
पूरन काम सदा सुख धाम,
निरंजन राम सिरज्जनहारौ ।
सेवक होइ रह्यौ सबकौ नित,
कुंजर कीट हि देत अहारौ ॥
भंजन दुख दरिद्र निवारन,
चिंत करै पुनि संभ्र सवारौ ।
ऐसौ प्रभू तजि आन उपासत,
सुन्दर व्है तिनकौ मुख कारौ ॥४॥
होइ अनन्य भजै भगवंत हि,
और कछू उरि मैं नहि राखै ।
देवी ऊ देव जहां लग है,
डरि कै तिनसौं कहुं दीन न भाखै ॥

(३) छारि-राख, धूल । (४) हलाहल-सबसे भयंकर विष ।

जोग हु जज्ञ व्रतादि क्रिया,
तिनकौ नहि तौ सुपिनै अभिलाखै ।
सुन्दर अमृत पान कियौ तव,
तौ कहि कौन हलाहल चाखै ॥५॥

मनहर छंद

काहे कौ फिरत नर भटकत ठौर ठौर,
डागुलै की दौर देवी देव सव जानिये ।
योग यज्ञ जप तप तीरथ व्रतादि दान,
तिनहू कौं फल सोऊ मिथ्याई वखानिये ॥
सकल उपाय तजि, एक राम नाम भजि,
याहि उपदेश सुनि हृदै माहि आनिये ।
नाहि तै समुझि करि सुन्दर विश्वास धरि,
और कोऊ कहै कछु ताकी नहि मानिये ॥६॥

पति ही सौ प्रेम होइ, पति ही सौ नेम होइ,
पति ही सौं क्षेम होइ, पति ही सौ रत है ।
पति ही है यज्ञ योग, पति ही है रस भोग,
पति ही है जप तप, पति ही कौ यत है ॥
पति ही है ज्ञान ध्यान, पति ही है पुन्य दान,
पति ही है तीर्थ न्हान, पति ही कौ मत है ।
पति बिन पति नाहि, पति बिन गति नांहि,
सुन्दर सकल बिधि एक पतिव्रत है ॥७॥

जल कौ सनेही मीन विछुरत तजै प्रान,
मनि बिन अहि जैसे जीवत न लहिये ।
स्वाति बूद के सनेही प्रगट जगत माहि,
एक सीप दूसरौ सु चातक ऊ कहिये ।।
रवि कौ सनेही पुनि कमल सरोवर मैं,
शशि कौ सनेही ऊ चकोर जैसे रहिये ।
तैसे ही सुन्दर एक प्रभु सौं सनेह जोरि,
और कछु देखि काहू ओर नहिं बहिये ।।८।।

।। इति पतिव्रता को अङ्ग सम्पूर्ण ।।

अथ विरहनी उलाहने को अंग

॥१७॥

मनहर छंद

पिय को अदेसो भारी तोसो कहौ सुनि प्यारी,
  यारी तोरि गये सु तो अजहू न आये है ।
मेरै तो जीवन-प्रान निस दिन उहै ध्यान,
  मुख सो न कहू आन, नैन झर लाये हैं ॥
जब तै गये बिछोहि कल न परत मोहि,
  तातै हू पूछत तोहि किन बिरमाये है ।
सुन्दर बिरहनि कै सोच सखी बार बार,
  हमको बिसारि अब कौन के कहाये है ॥१॥
हमको तौ रैनि दिन शंक मन माहि रहै,
  उनकी तौ बातनि मैं ठीक हू न पाइये ।
कबहू सदेसौ सुनि अधिक उछाह होइ,
  कबहूक रोइ रोइ आसुनि बहाइये ॥
औरनि के रस बस हौइ रहे प्यारे लाल,
  आवनि की कहि कहि हमकौं सुनाइये ।
सुन्दर कहत ताहि काटिये जु कौन भांति,
  जो तौ रूख आपनेई हाथ से लगाइये ॥२॥

(१) अदेसो-आश्चर्य ।

मोसौ कहै औरसी ही, वासौ कहै औरसी ही,
जासौ कहै ताही के प्रतीति कैसे होत है ।
काहू कौ सभास करै, काहू सौ उदास फिरै,
काहू सौ तौ रस बस एकमेक पोत है ।।
दगाबाजी दुबिध्या तौ मन की न दूरि होइ,
काहू कै अंधेरौ घर, काहू कै उदोत है ।
सुन्दर कहत जाकै पीर सो करै पुकार,
जाकै दुख दूरि गयौ ताकै भई वोत है ।।३।।
हीये और जीये और लीये और दीये और,
कीये और कौनऊ अनूप पाटी पढे है ।
मुख और बैन और नैन और सैन और,
तन और मन और जत्र माहिं कढे है ।।
हाथ और पाव और सीसहू श्रवन और,
नख सिख रोम रोम कलई सौ मढे है ।
ऐसो तौ कठोरता सुनी न देखी जगत मैं,
सुन्दर कहत काहू बज्र ही के गढें हैं ।।४।।
भई हू अति बावरी विरह घेरी बावरी,
चलत ऊंचौ बावरी, परौंगी जाइ बावरी ।

(३) वोत-सुख शान्ति ।

फिरत हो उतावरी लगत नहिं तावरी,
　　सु वाही को बनावरी चल्यो है जान नाव री ॥
थके हैं दोउ पांव री, चढत नहिं पाव री,
　　पियारो नहिं पाव री, जहर खाटि पाव री ।
दौरत नहिं नावरी, पुकारि कै सुनाव री,
　　सुन्दर कोउ नावरी, डूबत राखै नाव री ॥५॥

॥ इति विरहनी उलाहने को अंग सम्पूर्ण ॥

(५) वावरी-वावली, पागल । वाव-वायु, श्वास । तावरी-तावडी, धूप । उतावरी-उतावलो । पावरी-पावडी ।

अथ शब्द सार को अंग ॥१८॥

मनहर छंद

भूल्यौ फिरै भ्रम तै करत कछु और और,
  करत न ताप दूरि, करत सताप कौ ।
दक्ष भयौ रहै पुनि दक्ष प्रजापति जैसैं,
  देत परदक्षिनां, न दक्षिना दे आपकौ ॥
सुन्दर कहत ऐसै जांनै न जुगति कछु,
  और जाप जपै, न जपत निज जाप कौ ।
बाल भयौ युवा भयौ बय बीतै बृद्ध भयौ,
  बपुरूप होई कै बिसरि गयौ बाप कौ ॥१॥

इन्दव छंद

पांन उहै जु पीयूष पिवै नित,
  दांन उहै जु दरिद्र ही भानै ।
कान उहै सुनियें जश केशव,
  मान उहै करिये सनमानै ॥
तान उहै सुलतान रिझावत,
  जान उहै जगदीश ही जानै ।
बान उहै मन बेधत सुन्दर,
  ज्ञान उहै उपजै न अज्ञानै ॥२॥

---

(१) वय-भ्रमर । बपु-शरीर । सुलतान-परमेश्वर ।

सूर उहै मन को बसि राखत,
क्रूर उहै रन माहि लजै है।
त्याग उहै अनुराग नहीं कछु,
भाग उहै मन मोह तजै है॥
तज्ञ उहै निज तत्वनि जानत,
यज्ञ उहै जगदीश यजै है।
रत्त उहै सी रत सुन्दर,
भक्त उहै भगवंत भजै है॥३॥

चाप उहै कसिये रिपु ऊपरि,
दाप उहै दलकारि ही मारै।
छाप उहै हरि आप दई सिर,
थाप उहै थपि और न धारै॥
जाप उहै जपिये अजपा नित,
खाप उहै निज खाप विचारै।
आप उहै सबको प्रभु सुन्दर,
पाप हरै अरु ताप निवारै॥४॥

---

(३) तज्ञ-तत्त्वज्ञ, ज्ञानी।

(४) खाप-जाति।

भौन उहै भय नाहि न जा महिं,
गौन उहै फिर होइ न गौना ।
वौन उहै बमिये विषया रस,
रौंन उहै प्रभु सौ नित रौना ॥
मौन उहै जु लिये हरि बोलत,
लौन उहै सब और अलौना ।
सौंन उहै गुरु संत मिलै जब,
सुन्दर शंक रहै नहिं कौना ॥५॥
कार उहै अविकार रहै नित,
सार उहै जु असार हि नाखै ।
प्रीति उहै जु प्रतीति धरै उरि,
नीति उहै जु अनीति न भाखै ॥
तंत उहै लगि अंत न टूटत,
संत उहै अपनौ सत राखै ।
नाद उहै सुनि बाद तजै सब,
स्वाद उहै रस सुन्दर चाखै ॥६॥

(६) भौन-भवन, मकान। गौन-गमन। वौन-वमन, उल्टी। रौन-रोना। लौन-लवण, नमक। सौन-शकुन, सुगन।

श्वास उहै जु उशास न छाडत,
नाश उहै फिरि होइ न नाशा ।
पास उहै सत पास लगै जम,
पास कटै, प्रभु कै नित पासा ।
बास उहै गृह बास तजै,
वनबास नही तिहि ठाहर बासा ।
दास उहै जु उदास रहै,
हरिदास सदा कहि सुन्दरदासा ॥७॥

श्रोत्र उहै श्रुति सार सुनै नित,
नैन उहैं निज रूप निहारै ।
नाक उहै हरि नाक हि राखत,
जीभ उहै जगदीश उचारै ॥
हाथ उहै करिये हरि कौ कृत,
पाव उहै प्रभु कै पथ धारै ।
शीस उहै करि श्याम समर्पन,
सुन्दर यौ सब कारिज सारै ॥८॥

सोवत सोवत सोइ गयौ शठ,
रोवत रौवत कै बर रोयौ ।
गोवत गोवत गोइ धर्‌यौ धन,
खोवत खोवत तै सब खोयौ ॥
जीवत जोवत बीति गये दिन,
बोवत बोवत लै बिख बोयौ ।

मुन्दर सुन्दर राम भज्यौ नहिं,
ढोवत ढोवत बोझ हि ढोयौ ॥६॥

देखत देखत देखत मारग,
बूझत बूझत बूझत आयौ ।
सूझत सूझत सूझ परी सब,
गावत गावत गोविंद गायौ ॥
सोधत सोधत शुद्ध भयौ पुनि,
तावत तावत कंचन तायौ ।
जागत जागत जागि पर्यौ जब,
सुन्दर सुन्दर सुन्दर पायौ ॥१०॥

॥ इति शब्द सार को अंग सम्पूर्ण ॥

अथ सूरातन को अंग ॥१९॥

मनहर छंद

सुनत नगारै चोट बिगसै कवल मुख,
अधिक उछाह फूल्यौ माइ हू न तन मैं ।
फेरै जब सागि तब कोऊ नहि धीर धरै,
काइर कपाइमान होत देखि मन मैं ॥
टूटिकै पतग जैसे परत पावक माहि,
ऐसे टूटि परै वहु सावत के घन मैं ।
मारि घमसान करि सुन्दर जुहारै स्याम,
सोई शूरबीर रुपि रहै जाइ रन मैं ॥१॥

हाथ मैं गह्यौ है खग, मरिबे कौ एक पग,
तन मन आपनौ समरपन कीनौ है ।
आगै करि मीच कौ पर्‌यौ है डाकि रन बिच,
टूक टूक होइ कै भगाइ दल दीनौ है ॥
खाइ लौन श्याम कौ हरामखोर कैसे होइ,
नामजाद जगत मैं जीत्यौ पन तीनौ है ।
सुन्दर कहत ऐसौ कोऊ एक शूरबीर,
शोश कौ उतारिकै सुजस जाइ लीनौ है ॥२॥

---

(२) खग-खड्ग, तलवार । मीच-मौत । दल-शत्रु की सेना । सूरातन-शूरवीरता।

पांव रोपि रहै रन माहि रजपूत कोऊ,
हय गय गाजत जुरत जहां दल है ।
बाजत झुझाऊ सहनाई सिधू राग पुनि,
सुनत ही काइर की छूटि जात कल है ॥
झलकत बरछी तरछी तरवारि बहै,
मार मार करत परत खल भल है ।
ऐसै जुद्ध मैं अडिग सुन्दर सुभट सोई,
घर माहि सूरमा कहावत सकल है ॥३॥

अशन बसन बहू भूषन सकल अंग,
सम्पति बिबिध भांति भर्यौ सब घर है ।
श्रवन नगारो सुनि छिनक मैं छोडि जात,
ऐसैं नहि जानैं कछू आगै मोहि मर है ॥
मन मैं उछाह रन माहि टूक टूक होइ,
निरभै निशंक वाकै रचहू न डर है ।
सुन्दर कहत कोऊ देह कौ ममत्त नाहि,
सूरमा कै देखियत शीश बिन धर है ॥४॥

जूझिबे कौ चाव जाकै ताकि ताकि करै घाव,
आगै धरि पाव फिरि पीछै न सभारि है ।
हाथ लीयै हथियार तीक्षण लगायौ धार,
बार नहि लागै सब पिशुन प्रहारि है ॥

(४) अशन-भोजन ।

ओट नहि राखै कछु लोट पोट होइ जाइ,
चोट नहि चूकै, शीश रिपु कौ उतारि है।
सुन्दर कहत ताहि नैकहू न सोच पोच,
ऐसौ शूरबीर धीर मीर जाइ मारि है ॥५॥
अधिक अजानबाहु मन मैं उछाह कीये,
दीये गजगाह मुख बरखत नूर है।
काढै जब करवाल वाल सब ठाढे होहिं,
अति बिकराल पुनि देखत करूर है॥
नैक न उसास लेत फौज कौं फिटाइ देत,
खेत नहि छाडै मारि करै चकचूर है।
सुन्दर कहत ताकी कीरति प्रसिद्ध होइ,
सोई शूरबीर धीर श्याम कै हजूर है ॥६॥
ज्ञान कौ कवच अग काहू सौं न होइ भग,
टोप शीस झलकत परम बिबेक है।
तिन्है ताजी असवार लीये समसेर सार,
आगे ही कौ पाव धरै भागणे की टेक है॥
छूटत बदूक बाण बीचे जहा घमसान,
देखिकै पिशुन दल मारत अनेक है।
सुन्दर सकल लोक माहि ताकौ जै जै कार,
ऐसौ शूरबीर कोऊ कोटिन मैं एक है ॥७॥

---

(६) अजानबाहु-अजानवाहु-दीर्घबाहु, शूरवीर। कर-वाल-तलवार।

शूरबीर रिपु कौ नमूनौ देखि चौट करै,
मारै तब ताकि करि तरवारि तीर सौ ।
साधु आठौ जाम बैठौ मन ही सौ शुद्ध करै,
जाकैं मुह माथौ नहिं देखियें शरीर सौ ।।
सूरबीर भूमि पर दौर करै दूरि लगे,
साधु सु नि कौ पकरि राखै धरि धीर सौ ।
सुन्दर कहत तहा काहू के न पाव टिकै,
साधु कौ सग्राम है अधिक शूरबीर सौं ।।८।।
खैंचि करडी कमान ज्ञान की लगायो बान,
मार्यौ महाबली मन जग जिन रान्यौ है ।
ताकै अगवानी पच ज़ोधा ऊ कतल कीये,
और रह्यौ पह्यौ सब अरि दल भान्यौ है ।।
ऐसौ कोऊ सुभट जगत मै न देखियत,
जाकै आगै कालहू सौ कपिकै परान्यौ है ।
सुन्दर कहत ताकी शोभा तिहूं लोक माहि,
साधु सौ न शूरबीर कोऊ हम जान्यौ है ।।९।।
काम सो प्रबल महा जीते जिन तीनौ लोक,
सो तौ एक साधु कै बिचार आगै हार्यौ है ।
क्रोध सो कराल जाकै, देखत न धीर धरै,
सोउ साधु क्षमा कै हथ्यार सौ बिदार्यौ है ।।
लोभ सो सुभट साधु तोष सौ गिराइ दियौ,
मोह सौ नृपति साधु ज्ञान सौ प्रहार्यौ है ।

सुन्दर कहत ऐसौ साधु कोऊ शूरबीर,
　ताकि ताकि सबहि पिशुन दल मार्‌यौ है ।।१०।।
मारे काम क्रोध जिन, लोभ मोह पीसि डारे,
　इन्द्रिय कतल करि कीयौ रजपूतौ है ।
मार्‌यौ मदमत्त मन, मार्‌यौ अहंकार मीर,
　मारे मद मच्छर ऊ ऐसौ रन रूतौ है ।।
मारि आशा तृष्णा जिन पापनी सापनी दोऊ,
　सबकौ प्रहारि निज पद ई पहूंतौ है ।
सुन्दर कहत ऐसे साधु कोऊ शूरवीर,
　वैरी सब मारि कै निचिंत होई सूतौ है ।।११।।
कियौ जिन मन हाथ इन्द्रिनि कौ सब साथ,
　घेरि घेरि आपने ई नाथ सौं लगाये हैं ।
और हू अनेक वैरी मारे सब युद्ध करि,
　काम क्रोध लोभ मोह खोदिकै वहाये हैं ।।
किये हैं संग्राम जिन दिये हैं भगाइ दल,
　ऐसे महा सुभट सुग्रन्थनि मैं गाये है ।
सुन्दर कहत और शूर यौं ही खपि गये,
　साधू शूरवीर वै ई जगत मैं आये हैं ।।१२।।

महामत्त हाथी मन राख्यौ है पकरि जिन,
अति ही प्रचड जामैं बहुत गुमान है।
काम क्रोध लोभ मोह बाधे चारो पांव पुनि,
छूटनै न पावै नैक प्रान पीलवान है॥
कबहू जो करै जोर सावधान साझ भोर,
सदा एक हाथ मैं अकुश गुरु ज्ञान है।
सुन्दर कहत और काहू कै न बसि होइ,
ऐसे कौन शूरबीर साधू के समान हैं॥१३॥

॥ इति सूरातन को अंग सम्पूर्ण ॥

अथ साधु को अंग ।।२०।।

इन्दव छंद

प्रीति प्रचड लगै परब्रह्म हि,
    और सबै कछु लागत फीको ।
शुद्ध हृदै मति होइ सु निर्मल,
    द्वैत प्रभाव मिटै सब जी कौ ।।
गोष्ठि रु ज्ञान अनत चलै जह,
    सुन्दर जैसैं प्रवाह नदी कौ ।
ताहि तें जानि करौ निसवासर,
    साधु कौ सग सदा अति नीकौ ।।१।।

जौ कोऊ जाइ मिलै उनसौं नर,
    होत पवित्र लगै हरि रगा ।
दोष कलक सबै मिटि जात सु,
    नीचहू आइकैं होत उतगा ।।
ज्यौं जल और मलीन महा अति,
    गग मिले होइ जात है गगा ।
सुन्दर शुद्ध करै ततकाल सु,
    है जग मांहि वडी सतसगा ।।२।।

---

(१) द्वैत-भेदभाव ।

(२) उतगा-उत्तम, ऊ चा ।

ज्यों लट भृंग करै अपनै सम,
तासनि भिन्न कहै नहिं कोई ।
ज्यौ द्रुम और अनेक हि भातिनि,
चदन के ढिग चंदन होई ॥
ज्यौ जल क्षुद्र मिलै जब गगहि,
होत पवित्र उहै जल सोई ।
सुन्दर जाति सुभाव मिटै सब,
साधु कै संगतै साधु ही होई ॥३॥
जो कोउ आवत है उनके ढिग,
ताहि सुनावत शब्द सदेसौ ।
ताहि कै तैसी ही औषद लावत,
जाहि कै रोग ही जांनत जैसौ ।
कर्म कलक हि काटत है सब,
शुद्ध करै पुनि कचन तैसौ ।
सुन्दर वस्तु विचारत है नित,
सतनि कौ जु प्रभाव है ऐसौ ॥४॥

---

(३) भृंग-भौरा । ढिग-पास । क्षुद्र-गंदा ।
(४) कंचन-सोना ।

जो परब्रह्म मिल्यों कोऊ चाहत,
तो नित संत समागम कीजै ।
अंतरि मेटि निरंतर ह्वै करि,
लै उनकौ अपनौ मन दीजै ॥
वै मुख द्वार उचार करैं कछु,
सो अनयास सुधा रस पीजै ।
सुन्दर सूर प्रकासत है उर,
और अज्ञान सबै तम छीजै ॥५॥

जा दिन तैं सतसंग मिल्यौ तब,
ता दिन तैं भ्रम भाजि गयौ है ।
और उपाइ थके सब ही जब,
संतनि अद्वय ज्ञान दयौ है ॥
पोत पवारि हि क्यों करि छूवत,
एक अमोलिक लाल लह्यौ है ।
कौन प्रकार रहै रजनी तम,
सुन्दर सूर प्रकाश भयौ है ॥६॥

---

(५) अन्तर-भेद । अनयास-सरलता से ।
(६) अद्वय-अभेद । पोत पवार-काच के दाने ।

संत सदा सबकौ हित वांछत,
जानत है नर बूडत काढै ।
दे उपदेश मिटाइ सबै भ्रम,
ले करि ज्ञान जिहाज ही चाढै ॥
जे विषिया सुख नाहिन छाड़त,
ज्यौ कपि मूठि गहै शठ गाढ ॥
सुन्दर यौ दुख कौ सुख मानत,
हाट ही हाट विकावत आढै ॥७॥

सो अनयास तिरै भवसागर,
जो सतसगति मैं चलि आवै ।
ज्यौ कनिहार न भेद करै कछु,
आइ चढै तिहि नाव चढावै ॥
ब्राह्मन क्षत्रिय वैश्य हू शूद्र,
मलेच्छ चडाल ही पार लघावै ।
सुन्दर बार कछू नही लागत,
या नर देह अभै पद पावै ॥८॥

ज्यौं हम खाहि पिवै अरु बोढहि,
तैसें ही ये सब लोग बखांनै ।
ज्यौं जलमैं शशिकै प्रतिबिंब ही,
आप समा जल जत प्रवानैं ॥

---

(८) कनिहार-कर्णधार, केवट ।

ज्यौ खग छाह धरा परि दीसत,
सुन्दर पखि ऊडै असमानै ।
त्यौ शठ देहनि के कृत देखत,
सतनि की गति क्यौ कोऊ जानै ॥९॥
जौ खपरा कर लै घर डोलत,
मागत भीख हि तौ नहि लाजै ।
जौ सुख सेज पटबर अबर,
लावत चदन तौ अति राजै ॥
जौ कोउ आइ कहै मुखतें कछु,
जानत ताहि बयारि हि वाजै ।
सुन्दर सशय दूरि भयौ सब,
जो कछु साधु करै सोई छाजै ॥१०॥
कोउक निंदत कोउक बदत,
कोउक आइ कै देत है भक्षन ।
कोउक आइ लगावत चदन,
कोउक डारत धूरि ततक्षन ॥
कोउ कहै यह मूरिख दीसत,
कोउ कहै यह आहि विचक्षन ।
सुन्दर काहू सौ राग न द्वेष सु,
ये सब जानहु साधु के लक्षन ॥११॥

---

(१०) खपरा-खप्पर ।

(११) विचक्षण-विद्वान् ।

तात मिलै पुनि मात मिलै,
सुत भ्रात मिलै युवती सुखदाई ।
राज मिलै गज बाज मिलै,
सर्व साज मिलै मन वांछित पाई ॥
लोक मिलै सुरलोक मिलै,
बिधिलोक मिलै बैकुण्ठ हि जाई ।
सुन्दर और मिलै सबही सुख,
दुर्लभ संत समागम भाई ॥१२॥

मनहर छन्द

देव हू भये तें कहा, इन्द्र हू भये तें कहा,
विधि हू कै लोक तें बहुरि आइयतु है ।
मानुष भये तें कहा भूपति भये तें कहा,
द्विज हू भये तें कहा पार जाइयतु है ॥
पशु हू भये तें कहा पखी हूं भये तें कहा,
पन्नग भये तें कहौ क्यों अघाइयतु है ।
छूटिबे कौं सुन्दर उपाइ एक साधु संग,
जिनकी कृपा तें अति सुख पाइयतु है ॥१३॥

---

(१२) तात-पिता ।
(१३) विधि-ब्रह्मा । पन्नग-सर्प ।

इन्द्रानी शिगार करि चंदन लगायौ अग,
 वाही देखि इन्द्र अति काम बस भयौ है ।
शूकरी हू कर्दम कै चहले मैं लौटि करि,
 आगै जाइ शूकर कौ मन हरि लयौ है ॥
जैसौ सुख शूकर कौ तैसौ सुख मघवा कौ,
 तैसौ सुख नर पशु पखिन कौ दयौ है ।
सुन्दर कहत जाकै भयौ ब्रह्मानद सुख,
 सोई साधु जगत मैं जन्म जीति गयौ है ॥१४॥

धूलि जैसौ धन जाकै शूलि से ससार सुख,
 भूलि जैसौ भाग देखै अन्त की सी यारी है ।
पाप जैसी प्रभुताई साप जैसौ सनमांन,
 वडाई हू विछुनी सी नागनी सी नारी है ॥
अग्नि जैसौ इन्द्रलोक विघ्न जसौ विधिलोक,
 कीरति कलक जैसी सिद्धि सी ठगारि है ।
वासना न कोऊ वाकी ऐसी मति सदा जाकी,
 सुन्दर कहत ताहि वदना हमारी है ॥१५॥

---

(१४) शृ गार-सजावट । कर्दम-कीचड । चहले मे-खड्डे मे । शूकर-सूअर । मघवा-इन्द्र ।

कांम ही न क्रोध जाकै लोभ ही न मोह् ताकै,
मद ही न मछर न, कोऊ न विकारी है ।
दुख ही न सुख मानै पाप ही न पुन्य जानै,
हरष न शोक आनै देह् ही तै न्यारी है ।।
निंदा न प्रशसा करै राग ही न दोष धरै,
लेन ही न देन जाकै कछू न पसारी है ।
सुन्दर कहत ताकी अगम अगाध गति,
ऐसौ कोऊ साधु सु तौ रामजी कौ प्यारौ है ।।१६।।

आठौ जाम यम नेम आठौ जाम रहै प्रेम,
आठौ जाम जोग जज्ञ कियौ बहु दान जू ।
आठौ जाम जप तप आठौ जाम लियौ व्रत,
आठौ जाम तीरथ मैं करत है न्हान जू ।।
आठौ जांम पूजा विधि आठौ जाम आरती हू,
आठौ जाम दडवत समरन ध्यान जू ।
सुन्दर कहत तिन कियौ सब आठौ जाम,
सोई साधु जाकै उर एक भगवान जू ।।१७।।

---

(१७) जाम-याम, पहर । जग्य-यज्ञ । न्हान-स्नान ।
समरण-स्मरण ।

जैसे आरसी कौ मैल काटत सिकलीगर,
मुख मै न फेर कोऊ वहै वाकौ पोत है ।
जैसे बैद नैन मैं सलाका मेलि शुद्ध करै,
पटल गये ते तहाँ ज्यौ की त्यौ ही जोत है ॥
जैसे वायु बादर बखेरि के उडाइ देत,
रवि तौ अकास माहि सदा ई उदोत है ।
सुन्दर कहत भ्रम छिन मैं बिलाइ जात,
साधु ही के सग ते स्वरूप ज्ञान होत है ॥१८॥
मृतक दादुर जीव सकल जिवाये जिन,
बरखत बानी मुख मेघ की सी धार कौ ।
देत उपदेश, कोऊ स्वारथ न लवलेश,
निश दिन करत है ब्रह्म ही विचार कौ ॥
और हू सदेह सब मेटत निमिष माहि,
सूरज मिटाइ देत जैसे अधकार कौं ।
सुन्दर कहत हस वासी सुख सागर के,
सतजन आये है सु पर उपकार कौ ॥१९॥

---

(१८) आरसी-काच, दर्पण । पोत-सफाई । सलाका-शलाका-सलाई । उदोत-प्रकाशमान ।

(१९) मृतक-मरा हुआ । दादुर-मेढक । निमिष-क्षण ।

हीरा ही न लाल ही न पारस न चिंतामनि,

और ऊ अनेक नग कहौ कहा कीजिये ।

कामधेनु सुरतरु चंदन कहौ अमृत,

नीका ऊ [illegible] दीठि [illegible] छीजिये ॥

पृथ्वी अप तेज वायु आकास लौं सकल जु,

चंद सूर सीतल तपत गुन लीजिये ;

सुन्दर विचार इम सोधि सब देखे लोग,

संतनि कैं सम कहौ और कहा दीजिये ॥२०॥

जिन तन मन प्रान दियो सब मेरैं हेत,

और हू ममत्व बुद्धि आपुनी उठाई है ।

जागत सोवत गावत है मेरे गुन,

मेरोई भजन ध्यान, दूसरी न काई है ॥

तिनकै मैं पीछै लग्यो फिरत हौं निसदिन,

सुन्दर कहत मेरी उन तैं बनाई है ।

वै हैं मेरे प्रिय, मैं हू उनकै अधीन सदा,

संतनि की महिमा तौ श्रीमुख सुनाई है ॥२१॥

---

(२०) सुरतरु-कल्पवृक्ष । अप-जल । व्योम-आकाश । सूर-सूर्य ।

(२१) काई-काम ।

प्रथम सुजश लेत शील हू सतोष लेत,
  क्षमा दया धर्म लेत पापतें डरतु हैं ।
इन्द्रिनि कौ घेरि लेत, मनहू कौ फेर लेत,
  जोग की जुगति लेत ध्यान लै धरतु है ।।
गुरु कौ बचन लेत, हरिजी कौ नाम लेत,
  आतमा कौ सोधि लेत भौजल तिरतु हैं ।
सुन्दर कहत जग सत कछु लेत नाहि,
  सतजन निस दिन लेबौई करतु है ।।२२।।

साचौ उपदेश देत भली भली मीख देत,
  समता सुबुद्धि देत कुमति हरत है ।
मारग दिखाइ देत भाव हू भगति देत,
  प्रेम की प्रतीति देत अभरा भरत हैं ।।
ज्ञान देत ध्यान देत आतमा बिचार देत,
  ब्रह्म कौ बताइ देत ब्रह्म मैं चरत है ।
सुन्दर कहत जग सत कछ देत नाहि,
  सतजन निश दिन देबौई करत है ।।२३।।

---

(२२) भौजल-भवजल, ससार-सागर ।

(२३) प्रतीति-भाव । अभरा-अपूर्ण, खाली । ब्रह्म में चरत है-स्वय ब्रह्मानन्द मे विहार करते है ,

जगत व्यौहार सब देखत है ऊपरि कौ,
अन्तहकरन कौ न नैंक षहिचानि है ।
छाजन कै भोजन कै हलन चलन कछु,
और कोऊ क्रिया करै सोई तौ वखानि है ।।
आपुनेई गुननि आरोपत अज्ञानी नर,
सुन्दर कहत तातै निदाई कौ ठानि है ।
भाव मैं तौ अन्तरि है राति अरु दिन कौ सौ,
साधु की परीक्षा कोऊ कैसे करि जानि है ।।२४।।

कूप मैं कौ मीडूका तौ कूप कौ सराहत है,
राजहस सौ कहै कितौक तेरौ सर है ।
मशका कहत मेरी सरभरि कौन उडै,
मेरै आगै गरुड की कितीयक जर है ।।
गुबरेला गोली कौ लुढाई करि मानै मोद,
मधुप कौ निंदत सुगंध जाकौ घर है ।
आपुनि न जानै गति सतनि कौ नाम धरै,
सुन्दर कहत देखौ ऐसौ मूढ नर है ।।२५।।

---

(२४) छाजन-छादन, वस्त्र । (२५) मशक-मच्छर । सरभरि-बराबर । जर-शक्ति, ताकत । गुबरेला-गोबर की गोली बनाने वाला जानवर । मधुप-भौरा ।

कोऊ साध भजनीक हुतौ लयलीन अति,
कबहू प्रारब्ध कर्म धका आइ दयौ है।
जैसैं कोऊ मारग मैं चलतैं आखुटि परै,
फेरि करि उठै तब उहै पथ लयौ है॥
जैसैं चन्द्रमा की पुनि कला क्षीन होइ गई,
सुन्दर सकल लोक दुतीया कौ नयौ है।
देव कौ देवातन गयौ तौ कहा भयौ बीर,
पीतर कौ मोल सु तौ नहि कछु गयौ है ॥२६॥

उही दगाबाज उही कु ठी जु कलक भर्यौ,
उही महापापी वाकै नख सिख कीच है।
उही गुरुद्रोही, गो ब्राह्मण कौ हननहार,
उही आतमा कौ घाती हिंसा वाकै बीच है॥
उही अघ कौ समुद्र उही अघ कौ पहार,
सुन्दर कहत वाकी बुरी भाति मीच है।
उही है मलेच्छ उही चडाल बुरे तैं बुरौ,
सतन की निंदा करै सु तौ महानीच है ॥२७॥

---

(२६) भजनीक-भजन करने वाला। आखुटि-ठोकर खाकर।

(२७) अघ-पाप। मीच-मौत। मलेछ-मलेच्छ।

परि है वज्राग ताकै ऊपरि अचानचक,
धूरि उडि जाइ कहु ठाहर न पाइ है ।
पोछै कैऊ युग महा नरक मैं परै जाइ,
ऊपरि तैं यमहू की मार बहु खाइ है ॥
ताकैं पीछै भूत, प्रेत थावर जगम जोनि,
सहैगो सकट तब पीछे पछताइ है ।
सुन्दर कहत और भुगतै अनन्त दुख,
सतनि कौ निदै ताकी सत्यानाश जाइ है ॥२८॥
ताही कैं भगति भाव उपजि हैं अनायास,
जाकी मति सन्तन सौ सदा अनुरागी है ।
अति सुख पावै ताकै दुख सब दूरि हौहि,
औरहू काहू की जिन निंदा मुख त्यागी है ॥
ससार की पाशि काटि पाइ है परम पद,
सतसग ही तैं जाकै ऐसी मति जागी है ।
सुन्दर कहत ताकौ तुरत कल्यान होइ,
सतनि को गुन गहै सोई बडभागी है ॥२९॥
जोग जग्य जप तप तीरथ व्रतादि दान,
साधन सकल नहि याकी सरभरि हैं ।

(२८) वज्रागवज्र की अग्नि ।

औऱ देवी देव हू उपासना अनेक भांति,
    शक सब दूरि करि तिनतें न डरि हैं ।।
सब ही के शीस पर पाव दे मुकति होइ,
    सुन्दर कहत सो तौ जनमैं न मरि हैं ।
मन बच काय करि अंतरि न राखै कछु,
    संतनि की सेवा करै सोई निसतरि है ।।३०।।

।। इति साधु को अंग सम्पूर्ण ।।

---

(३०) मुकति-मुक्त । अन्तर-भेद, फर्क ।

अथ भक्ति ज्ञान मिश्रित को अंग ।।२१।।

वैठत राम हि ऊठत राम हि,
बोलत राम हि राम कह्यौ है ।
जीमत राम हि पीवत राम हि,
धीमत राम हि राम गह्यौ है ।।
जागत राम हि सोवत राम हि,
जोवत राम हि राम लह्यौ है ।
देतहु राम हि लेतहु राम हि,
सुन्दर राम हि राम कह्यौ है ।।१।।

श्रोत्रहु राम हि नेत्रहु राम हि,
वक्त्र हु राम हि राम हि गाजै ।
शीशहु राम हि हाथहु राम हि,
पांव हु राम हि राम हि साजै ।।
पेट हु राम हि पीठ हु राम हि,
रोम हु राम हि राम हि बाजै ।
अन्तरि राम निरतर राम हि,
सुन्दर राम हि राम विराजै ।।२।।

(१-२) धीमत-ध्यान करते हुए । वक्त्र-मुख ।

भूमिहु राम ही आपहु रामें हि,
तेज हु राम हि वायु हु रामै ।
व्यौमहु राम हि चदहु राम हि,
सूरहु राम हि शीत न घामै ।।
आदिहु रामहि अतहु राम हि,
मध्य हु राम हि पुस न बामै ।।
आजहु रामहि कालहु राम हि,
सुन्दर रामहि म्हा महिं थामैं ।।३।।

देख हु राम अदेख हु राम हि,
लेख हु राम अलेख हु रामै ।
एक हु राम अनेक हु राम हि,
शेषहु राम अशेष हु तामै ।।
मौन हू राम अमौनहु राम हि,
गौनहु राम हि भौनहु ठामै ।
वाहिर राम हि भीतर राम हि,
सुन्दर रामहि है जग जामै ।।४।।

(३) पुस-पुरुष । वामै-स्त्री । म्हामहिं-हम सब मे । थामै-तुम सब मे ।

दूरि हु राम नजीक हु राम हि,
देश हु राम प्रदेश हु रामै ।
पूरब राम हि पच्छिम राम हि,
दक्षिन राम हि उत्तर धामै ॥
आगेहु राम हि पीछेहु राम हि,
व्यापक राम हि है वन ग्रामै ।
सुन्दर राम दसौं दिसि पूरन,
सुरगहु राम पतालहु तामै ॥५॥
आप हु राम उपावत राम हि,
भजन राम सवारन रामै ।
दृष्टि हु राम अदृष्टि हु राम हि,
इष्ट हु राम करै सब कामै ॥
वर्ण हु राम अवर्ण हु राम हि,
रक्त न पीत न श्वेत न श्यामै ।
मुनिहु राम अमुनि हु राम हि,
सुन्दर राम हि नाम अनामै ॥६॥

॥ इति भक्ति ज्ञान मिश्रित को अंग ॥

---

(५) सुरग-स्वर्ग । (६) उपावत-उत्पन्न करने वाले । भजन-मिटाने वाले । सवारन-सुधारने वाले, रक्षा करने वाले ।

अथ विपर्यय शब्द को अंग ।।२२।।

सवैया छंद

श्रवनहु देखि सुनै पुनि नैनहुं,
जिव्हा सूंघि नासिका बोल ।
गुदा खाइ इन्द्रिय जल पीवै,
बिनही हाथ सुमेर हि तोल ।।
ऊंचे पाइ मूंड नीचे कौ,
बिचरत तीनि लोक मैं डोल ।
सुन्दरदास कहै सुनि ज्ञानी,
भलीभाति या अर्थ हि खोल ।।१।।

अंधा तीनि लोक कौ देखै,
बहिरा सुनै बहुत बिधि नाद ।
नकटा बास कमल की लेवै,
गूंगा करै बहुत सबाद ।।
टूटा पकरि उठावै पर्वत,
पंगुल करै नृत्य अहलाद ।
जो कोऊ याकौ अर्थ बिचारै,
सुन्दर सोई पावै स्वाद ।।२।।
कुंजर कौ कीरी गिलि बैठी,
सिंघ हि खाइ अघानौ श्याल ।

देव माहि तैं देवल प्रगट्यौ,
देवल मैं तैं प्रगट्यौ देव ।
सिष गुरु ही उपदेशन लागौ,
राजा करैं रक की सेव ।।
बंध्या पुत्र पगु एक जायौ,
ताकौ घर खोवन की टेव ।
सुन्दर कहै सु पण्डित ज्ञाता,
जो कोऊ याकौ जानै भेव ।।६।।
कमल मांहि तैं पानी उपज्यौ,
पानी मंहि तैं उपज्यौ सूर ।
सूर मांहि शीतलता उपजी,
शीतलता मैं सुख भरपूर ।।
ता सुख को क्षय होइ न कबहू,
सदा एकरस निकट न दूर ।
सुन्दर कहैं सत्य यह यौ ही,
यामैं रती न जानहु कूर ।।७।।
हस चढ्यौ ब्रह्मा के ऊपर,
गरुड चढ्यौ पुनि हरि की पीठि ।
बैल चढ्यौ है शिव के ऊपर,
सौ हम देख्यौ अपनी दीठि ।।
देव चढ्यौ पाती के ऊपर,
जरख चढ्यौ डायनि परि नीठि ।

पुरुष एक पांनी महि प्रगट्यौ,
ता निगुरा की कैसी जाति ।
सुन्दर सोई लहैं अर्थ कौ,
जो नित करै पराई ताति ॥११॥

उनयौ मेघ घटा चहुं दिस तैं,
बर्षन लग्यौ अखडित धार ।
बूड्यौ मेर नदी सब सूकी,
झर लाग्यौ निस दिन इकसार ॥
कांसा पर्यौ बीजली ऊपरि,
कीयौ सब कुटुम्ब सहार ।
सुन्दर अर्थ अनूपम याकौ,
पण्डित होइ सु करै बिचार ॥१२॥

बाडी मा हैं माली निपज्यौ,
हाली मा हैं निपज्यौ खेत ।
हुस हि उलटि श्याम रग लाग्यौ,
भ्रमर उलटि करि हूवौ सेत ॥
ससिहर उलटि राहु कौ ग्रास्यौ,
सूर उलटि करि ग्रास्यौ केत ।
सुन्दर सगुरा कौं तजि भाग्यौ,
निगुरा सेती बाध्यौ हैत ॥१३॥

अग्नि मथन करि लकरी काढी,
सो वह लकरी प्रान अधार ।
पांनी मथि करि घीव निकार्यौ,
सो घृत खाइये बारम्बार ॥
दूध दही की इच्छा भागी,
जाकौ मथत सकल ससार ।
सुन्दर अब तौ भये सुखारे,
चिंता रही न एक लगार ॥१४॥
पात्र माहिं झोली गहि राखै,
योगी भिक्षा मागन जाइ ।
जागै जगत सोवई गोरख,
ऐसा शब्द सुनावै आइ ॥
भिक्षा फुरै बहुत करि ताकौ,
सो वह भिक्षा चेलहि खाइ ।
सुन्दर जोगी जुग जुग जीवै,
ता अवधू की दूरि बलाइ ॥१५॥
निर्दय होइ तिरै पसु घातक,
दयावंत बूडै भव माहिं ।
लोभी लगै सबनि कौ प्यारौ,
निर्लोभी कौ आदर नाहिं ॥
मिथ्यावादी मिलै ब्रह्म कौं,
सत्य कहैं ते जमपुर जाहिं ।

सुन्दर धूप माहिं शीतलता,
जलत रहै जे बैठे छाहिं ।।१६।।
माइ बाप तजि धी उमदानी,
हरषत चली खसम के पास ।
बहू विचारी बड बखतावरि,
जाके कहे चलत है सास ।।
भाई खरौ भलौ हितकारी,
सबै कुटम्ब कौ कोयौ नास ।
ऐसी बिधि घर बस्यौ हमारौ,
कहि समुझावै सुन्दरदास ।।१७।।
परधन हरै करै पर निंदा,
पर धी कौ राखै घर माहिं ।
मास खाइ मदिरा पुनि पीवै,
ताहि मुक्ति कौ सशय नाहिं ।।
अकर्म ग्रहै कर्म सब त्यागै,
ताकी सगति पाप नसाहिं ।
ऐसी करै सु सत कहावै,
सुन्दर और उपजि मरि जाहिं ।।१८।।
बढई चरखा भलौ सवार्यौ,
फिरनै लाग्यौ नीकी भाति ।
बहू सास कौ कहि समुझावै,
पूनी घटै दिवस नहिं राति ।

सुन्दर विधि सौं बुनै जुलाहा,
खासा निपजै ऊंची जाति ॥१९॥

घर घर फिरै कुमारी कन्या,
जनै जनै सौं करती संग ।
वेश्या सूं तौ भई पतिवरता,
एक पुरुष कै लागी अंग ॥
कलिजुग मांहैं सतजुग थाप्या,
पापी उदौ धर्म कौ भंग ।
सुन्दर कहै सु अर्थ हि पावै,
जो नीकै करि तजै अनंग ॥२०॥

विप्र रसोई करनै लाग्यौ,
चौका भीतरि बैठौ आइ ।
लकरी मांहैं चूल्हा दीयौ,
रोटी ऊपर तवा चढाइ ॥
खिचरी मांहैं हंडिया राधी,
सालन आक धतूरा नाइ ।
सुन्दर जीमत अति सुख पायौ,
सबकौं भोजन दियौ अघाइ ॥२१॥

बैल उलटि नाइक कौं लाद्यौ,
वस्तु मांहि भरि गौनि भराइ ।
भली भांति सौं सौदा कीयौ,
[illegible] ॥

नाइकनी पुनि हरषत डोलै,
    मोहि मिल्यौ नीकौ भरतार ।
पूंजी जाइ साह कौं सौपो,
    सुन्दर सिरतै उतर्‌या भार ॥२२॥

बनिक एक बनजी कौं आयौ,
    परै तावरा भारी भैंठि ।
भली बस्तु कछु लीनी दीनी,
    खैंचि गठरिया बांधी ऐंठि ॥
सौदा कियौ चल्यौ पुनि घर कौ,
    लेखा कियौ बरीतर बंठि ।
सुन्दर साह खुसी अति हूवा,
    बैल गया पूजी मैं पैंठि ॥२३॥
पहरायत घर मुस्यौ शाह कौ,
    रक्षा करनै लाग्यौ चोर ।
कोतवाल काठौ करि बाध्यौ,
    छूटै नही साझ अरु भोर ॥
राजा गाव छौडि करि भागौ,
    हूवौ सकल जगत मैं शोर ।
परजा सुखी भई नगरी मैं,
    सुन्दर कोई जुलम न जोर ॥२४॥

राजा फिरै विपति को मार्‌यौ,
घर घर टुकरा मागै भीख ।
पाव पियादौ निसि दिन डोलै,
घोरा चाल सकै नहिं वीख ॥
आक अरण्ड की लकरी चूपै,
छाडै बहुत रस हि भरे ईख ।
सुन्दर कोउ जगत मैं विरलौ,
या मूरख कौ लावै सीख ॥२५॥
पानी जरै पुकारै निसि दिन,
ताकौं अग्नि बुझावै आइ ।
हूं शीतल तूं तप्त भयौ क्यौं,
बारबार कहै समझाइ ॥
मेरी लपट तोहि जो लागै,
तौ तूं भी शीतल ह्वै जाइ ।
कबहूं जरनि फेरि नहिं उपजै,
सुन्दर सुख मैं रहै समाइ ॥२६॥
खसम मर्‌यौ जोरू के पीछै,
कह्यौ न मानै भौंडी रांड ।
जित तित फिरै भटकती यौंही,
मैं तो दिये टका द्वै भांड ॥
जौ तू सुन न मानौ मेरी,
तूं मिलि बैठी मानौ माइ ।

सुन्दर कहै सीख सुनि मेरी,
अब तूं घर घर फिरबौ छाड ।।२७।।
पथो मांहि पथ चलि आयौ,
सो वह पथ लख्यौ नहि जाइ ।
वाही पंथ चल्यौ उठि पथी,
निर्भय देश पहूच्यौ आइ ।
तहा दुकाल परै नहिं कबहूं,
सदा सुभिक्ष रह्यौ ठहराइ ।
सुन्दर दुखी न कोऊ दीसै,
अक्षय सुख मैं रहै समाइ ।।२८।।

एक अहेरी बन मै आयौ,
खेलन लागौ भली शिकार ।
कर मैं धनुष कमरि मैं तरकस,
सावज घेरे बारबार ।।
मार्‌यौ सिंघ व्याघ्र पुनि मार्‌यौ,
मारी बहुरि मृगनि की डार ।
ऐसैं सकल मारि घर ल्यायौ,
सुन्दर राज ह कियौ जुहार ।।२९।।

सुक के वचन अमृतमय ऐसे,
कोकिल धार रहै मन माहि ।
सारो सुनै भागवत कबहो,
सारस तोऊ पावै नाहि ॥
हंस चुगै मुक्ताफल अर्थहिं,
सुन्दर मानसरोवर न्हाहि ।
काक कवीश्वर विपई जेते,
ते सब दौरि करक हि जाहि ॥३०॥

नष्ट होहिं द्विज भ्रष्ट क्रिया करि,
कष्ट किये नहिं पावै ठौर ।
महिमा सकल गई तिनि केरी,
रहत पवन तर नव गिरमौर ॥
जित तित फिरहिं नही कछु आदर,
तिनकौं कोउन धारै ठौर ।
सुन्दरदास कहै समुझावै,
ऐसौ कोउ करौ मति और ॥३१॥

सास्त्र वेद पुरान पढै किनि,
पुनि व्याकरन पढै जे कोट ।
[illegible]
[illegible] ॥

रासि काम तबही बनि आवै,
मन मैं सब तजि राखै दोइ ।
सुन्दरदास कहै सुनि पण्डित,
राम नाम बिन मुक्त न होइ ।।२२।।

।। इति विपर्य शब्द को अंग सम्पूर्ण ।।

नीच ऊंच बुरौ भलौ सुजन दुर्जन पुनि,
    पंडित मूरख शत्रु मित्र रक राव है।
मान अपमान पुन्य पाप सुख दुख दोऊ,
    स्वरग नरक बध मोक्ष हू कौ चाव है ।।
देवता असुर भूत प्रेत कीट कुजर ऊ,
    पशु अरु पंखी श्वान शूकर बिलाव है।
सुदर कहत यह एकई अनेक रूप,
    जोई कछु देखिये सु आपुनौ ई भाव है ।।३।।

याहीकै जागत काम याहीकै जागत क्रोध,
    याही कै जागत लोभ याही मोह मातौ है।
याकौ याही बैरी होत याकौ याही मित्र होत,
    याकौ याही सुख देत याही दुख दातौ है ।।
याही ब्रह्मा याही रुद्र याही विष्णु देखियत,
    याही देव दैत्य यक्ष सकल संघातौ है।
याही कौ प्रभाव सु तौ याही कौं दिखाई देत,
    सुदर कहत याही आत्मा विख्यातौ है ।।४।।

याही कौ तौ भाव याकौ शक उपजावत है,
    याही कौ तौ भाव याही निशक करतु है।
याही कौ तौ भाव याकौ भूत प्रेत होइ लागौ,
    याही कौ तौ भाव याकी कुमति हरतु है ।।

आपुनै भाव तैं सूर सौ दीसत,
    आपुनै भाव तै चद्र सौ भासै ।
आपुनै भाव तैं तार अनत जु,
    आपुनै भाव तैं वीजु ऊजासै ।।
आपुनै भाव तैं नूर है तेज है,
    आपुनै भाव तै जोति प्रकासै ।
तैसौ ही ताहि दिखावत सुदर,
    जैसो ही होत है जाहि कौ आसै ।।८।।

आपुनै भाव तै सेवक साहिब,
    आपुनै भाव सबै कोऊ ध्यावै ।
आपुनै भाव तै अन्य उपासत,
    आपुनै भाव तै भक्त हू गावै ।।
आपुनै भाव तै दुष्ट सहारत,
    आपनै भाव तै वाहिर आवै ।
जैसौ हि आपुनौ भाव है सुदर,
    ताहि कौ तैसौ हि होइ दिखावै ।।६।।

आपुनै भाव तै दूर वतावत,
    आपुनै भाव नजीक वखान्यौ ।
आपुनै भाव तै दूध पिवायौ जु,
    आपनै भाव तै वीठल जान्यौ ।।

आपुनै भावतैं चार भुजा पुनि,
आपुनै भाव तैं सीस सौ मान्यौ।
सुंदर आपुनै भाव कै कारन,
आपु हि पूरन ब्रह्म पिछान्यौ ॥१०॥

आपनै भाव तै होइ उदास जु,
आपनै भाव तै प्रेम सौ रोवै।
आपनै भाव मिल्यौ पुनि जानत,
आपनै भाव तै अन्तरि जोवै॥
आपनै भाव रहै नित जागत,
आपनै भाव समाधि मैं सोवै।
सुंदर जैसौ ई भाव है आपनौ,
तैसोई आपु तहां तहां होवै ॥११॥

आपनै भाव तै भूलि परयौ भ्रम,
[illegible] भयौ अभिमानी।
आपनै भाव तै [illegible],
आपनै भाव तै बुद्धि [illegible]॥
आपनै भाव तै आप [illegible],
आपनै भाव तै [illegible]।
सुंदर जैसो हि भाव है आपनौ,
तैसो हि [illegible] ॥१२॥

॥ इति आपुने भाव कौ अंग सम्पूर्ण ॥

अथ स्वरूपबिस्मरण को अंग

॥२४॥

इन्दव छंद

जा घट की उनहार है जैसी हि,
ताघट चेतन तैसौ हि दीसै।
हाथी की देह मैं हाथी सौ मानत,
चीटी की देह मैं चीटी कीरी सै ॥
सिंह की देह मैं सिंह सौ मानत,
कोश की देह मैं मानत कीशै।
जैसी उपाधि भई जहा सुंदर,
तैसौ हि होइ रह्यौ नखशीशै ॥१॥

जैसे हि पावक काठ के योग तं,
काठ सौ होइ रह्यौ इक ठौरा।
दीरघ काठ मै दीरघ लागत,
चोरस काठ मैं लागत चौरा ॥
आपनौ रूप प्रकास करै जव,
जारि करै तब औरको औरा।
तैसे हि सुंदर चेतन आप सु,
आपकौ नाहि न जानत बौरा ॥२॥

---

(१) घट-शरीर। उनहार-आकृति। चेहरा। कीश-वदर।

(२) पावक—अग्नि। बौरा—पागल।

मनहर छन्द

अजर अमर अविगत अविनाशी अज,
कहत सकल सन्त श्रुति सबगाहे तें।
निर्गुन निर्मल अति शुद्ध निरबंध नित,
ऐसौऊ कहत और ग्रथनि के थाहे तें॥
व्यापक अखंड एकरस परिपूरन है,
सुन्दर सकल रमि रह्यौ ब्रह्म ताहे तें।
सहज सदा उद्योत याही तें अचंभा होत,
आप ही को आप भूलि गयौ सु तौ काहे तें॥३॥

जैसे मीन मांस कौं निगल जात लोभ लागि,
लोह को कंटक नहीं जानत उमाहे तें।
जैसें कपि गागरि मैं मूठि बांधि राखै शठ,
छाडि नहिं देत सु तौ स्वाद ही के चाहे तें।
जैसें शुक नारियर चूंच मारि लटकत,
सुन्दर सहत दुख देख याहि लाहे तें।
देह कौ संजोग पाइ इंद्रिनि कै वसि पर्यौ,
आपुही कौं आप भूलि गयौ सुख चाहे तें॥४॥

---

(३) अज-अजन्मा। श्रुति-वेद। निरबंध-बंधनरहित। उद्योत-प्रकाशमान। एकरस-सदा इकसार रहने वाला।

(४) कंटक-कांटा। मीन-मछली। गागरि-घडा।

इन्दव छंद

ज्यौ कोऊ मद्य पीयें अति छाकत,
नांहि कछू सुधि है भ्रम ऐसो ।
ज्यौ कोऊ खाइ रहै ठग मूरि हि,
जानै नही कछू कारन तैसो ॥
ज्यौं कोऊ बालक शक उपावत,
कपि उठै अरु मानत भै सो ।
तैसे हि सुन्दर आपकौं भूलि सु,
देखहु चेतनि मानत कसो ॥५॥

ज्यौं कोऊ कूप मैं झाकि अलापत,
वसीही भांति सु कूप अलापै ।
ज्यौ जल हालत है लगि पौन,
कहै भ्रमतें प्रतिबिंब हि कांपै ॥
देह के प्रान के जे मन के कृत,
मानत है सब मौहि कौ व्यापै ।
सुन्दर पेच पर्यो अतिशै करि,
भूलि गयौ भ्रम तें भ्रम आपै ॥६॥

---

(५) मद्य-शराब । (६) अतिशै-बहुत ।
(७) महातम-अपनी महिमा, बडप्पन ।

ज्यौं द्विज कोउक छाडि महातम,
  शूद्र भयो करि आपुको मान्यो।
ज्यौं कोउ भूपति सोवत सेज सु,
  रंक भयो सुपने महि जान्यो॥
ज्यौं कोउ रूप की राशि अतित,
  कुरूप कहै भ्रम मेचक आन्यो।
तैसेंहि सुन्दर देह सौं व्है करि,
  या भ्रम आपुहि आप भुलान्यो॥७॥

एकहि व्यापक वस्तु निरंतर,
  विश्व नहीं यह ब्रह्म विलासै।
ज्यौं नट मंत्रनि सौं दृग बांधत,
  है कछु औरसु औरई भासै॥
ज्यौं रजनी महिं सूझि परै नहिं,
  जौ लगि सूरज नाहिं प्रकासै।
त्यौं यह आपहि आप न जानत,
  सुन्दर व्है रह्यौ सुन्दरदासै॥८॥

मनहर छन्द

इद्रिनि कौ प्रेरि पुनि इद्रिनि कै पीछे पर्‌यौ,
  आपुनि अविद्या करि आप तनु गह्यौ है।
जोई जोई देह कौ संकट कछु परै आइ,
  सोई सोई मानै आप यातैं दुख सह्यौ है॥

भ्रमत भ्रमत कहू भ्रम कौ न आवै अंत,
चिरकाल बीत्यौ पै स्वरूप कौ न लह्यौ है।
सुन्दर कहत देखौ भ्रम की प्रबलताई,
भूतनि मैं भूत मिलि भूत सौ ह्वै रह्यौ है ॥९॥

जैसे शुक नलिका न छांडि देत चगुल तैं,
जानै काहू औरै मोहि बाधि लटकायौ है।
जैसे कपि गुंजनि कौ ढेर करि मानै आगि,
आगे धरि तापै कछू शीत न गमायौ है॥
जैसे कोऊ दिसा भूलि जातहु तौ पूरब कौ,
उलटि अपूठौ फेरि पछिम कौ आयौ है।
तैसे ही सुन्दर सब आप ही कौ भ्रम भयौ,
आपुही कौ भूलि करि आपु ही बधायौ है ॥१०॥

जैसे कोऊ कामिनी के हिये पर चूखै बाल,
सुपने मैं कहै मेरौ पुत्र काहू हर्यौ है।
जैसे कोऊ पुरुष कै कंठ विषै हुति मनि,
ढूंढत फिरत कछु ऐसौ भ्रम भयौ है॥
जैसे कोऊ वायु करि बावरौ बकत डोलै,
और की औरई कहै सुधि भूलि गयौ है।
तैसे ही सुन्दर निज रूप कौ बिसारि देत,
ऐसौ भ्रम आपु ही कौं आपु करि लयौ है ॥११॥

दीन हीन छीन सौ व्है जात छिन छिन माहि,
देह के सजौग पराधीन सौ रहतु है।
शीत लगं घाम लगै भूख लगै प्यास लगे,
शोक मोह मानि अति खेद कौ लहतु है॥
अंध भयौ पंगु भयौ मूक हौ बधिर भयौ,
ऐसौ मानि मानि भ्रम नदी मैं बहतु है।
सुन्दर अधिक मोहि याही तैं अचंभौ आहि,
भूँलि कै स्वरूप कौ अनाथ सौ कहतु है॥१२॥

जैसैं कोऊ सुपिनै मैं कहै मै तौ ऊंट भयौ,
जागि करि देखै उहै मनुष स्वरूप है।
जैसे कोऊ राजा पुनि सोइकै भिखारी होई,
आंखि उघरे तै महाभूपति कौ भूप है॥
जैसैं कोऊ भ्रम ही तै कहै मेरौ सिर कहा,
भ्रम के गये तै जानै सिर तौ तद्रूप है।
तैसैं हि सुन्दर यह भ्रम करि भूलौ आप,
भ्रम कै गये तै यह आतमा अनूप है॥१३॥

जैसे कोऊ पोसती की पाग परी भूमि पर,
हाथ लै कै कहै मैं तो पाग एक पाई है।
जैसैं सेखचिली हू मनोरथनि कीयौ घर,
कहै मेरौ घर गयौ गागरि गिराई है॥

जैसे काहू भूत लग्यौ बकत है आकबाक,
    सुधि सब दूरि भई औरै मति आई है।
तैसे ही सुन्दर यह भ्रम करि भूलौ आप,
    भ्रम के गये तें यह आतमा सदाई है ॥१४॥

आपु ही चेतन यह इद्रिनि चेतनि करि,
    आपु ही मगन होइ आनन्द बढायौ है।
जैसे नर शीतकाल सोवत निहाली ओढि,
    आपु ही तपत करि आपु सुख पायौ है॥
जैसे बाल लकरी कौ घौरा करि डाकि चढै,
    आप असवारि होइ आप ही कुदायौ है।
तैसे ही सुन्दर यह जड कौ सजोग पाइ,
    पर सुख आपु मानि, आपु ही-भुलायौ है ॥१५॥

कहू भूल्यौ कामरत, कहू भूल्यौ साधि जत,
    कहू भूल्यौ गृहि मधि, कहूं वनबासी है।
कहू भूल्यौ नोच जानि कहू भूल्यौ ऊच मानि,
    कहू भूल्यौ मोह बाधि कहू तौ उदासी है॥
कहू भूल्यौ मौन धरि कहू बकबाद करि,
    कहू भूल्यौ मक्कै जाइ कहू भूल्यौ कासी है।
सुन्दर कहत अहकार ही तें भूल्यौ आप,
    एक आवै रोज अरु दूजै बडी हासी है ॥१६॥

---

(१५) निहाली-रजाई।

मैं बहुत सुख पायौ मैं बहुत दुख पायौ,
मैं अनन्त पुन्य कीये मेरै पोतै पाप है।
मैं कुलीन विद्या कौ पडित परवीन महा,
मैं तौ मूढ अकुलीन हीन मेरौ बाप है।।
मैं हौं राजा मेरी आन फिरै चहू चक माहि,
मैं तो रक द्रव्यहीन मोहि तौ सताप है।
सुन्दर कहत अहकार ही तै जीव भयौ,
अहकार गये यह एक ब्रह्म आप है।।१७।।

देह ही मुपुप्ट लगै देह ही दूबरी लगै,
देह ही कौ शीत लगै देह ही कौं तावरौ।
देह ही कौ तीर लगै देह कौ तुपक लगै,
देह कौ कृपान लगै देह ही कौं घावरौ।।
देह ही सुरूप लगै देह ही कुरूप लगै,
देह ही जुवान लगै देह वृद्ध डावरौ।
देह ही सौ वाधि हेत आपु विषै मांनि लेत,
मुन्दर कहत ऐसौ बुद्धि हीन वावरौ।।१८।।

इन्दव छद

आपु हि चेतन ब्रह्म अखडित,
सो भ्रम तै कछु अन्य परेखै।
ढूढत ताहि फिरै जित ही तित,
साधत जोग वनावत भेखै।।

औरऊ कष्ट करै अतिशै करि,
प्रत्यक आतम तत्त न पेखै ।
सुन्दर भूलि गयौ निज रूप ही,
है कर ककन दर्पन देखै ।।१९।।

सूत्र गले महि मेलि भयौ द्विज,
ब्राह्मन व्है कर ब्रह्म न जान्यौ ।
छत्रिय व्है करि छत्र धर्‌यौ सिर,
है गय पैंदल सो मन मान्यौ ।।
वैशि भयौ वपु की वय देखत,
झूठ प्रप च वनिज्ज 'हि ठान्यौ ।
शूद्र भयौ मिलि शूद्र शरीर ही,
सुन्दर आपु नहो पहिचान्यौ ।।२०।।

ज्यो रवि कौ रवि ढू ढत है कहु,
तप्ति मिलै तनु शीत गवाऊ ।
ज्यौ शशिकौ शशि चाहत है पुनि,
शीतल व्है करि तप्ति बुझाऊ ।।
ज्यौ सनिपात भये नर टेरत,
है घर मैं अपनै घर जाऊ ।
त्यौ यह सुन्दर भूलि स्वरूप ही,
ब्रह्म कहै कब ब्रह्म हि पाऊ ।।२१।

आपु न देखत है अपनौ मुख,
दर्णन काट लग्यौ अति थूला ।
ज्यौ दृग देखत तै रहि जात,
भयौ जबही पुतरी पर फूला ।।
छाइ अज्ञान रह्यो अभि अतरि,
जांनि सकै नहिं आंतम मूला ।
सुन्दर यौ उपज्यो मन कै मल,
ज्ञान बिना निजरूपहि भूला ।।२२।।

दीन हुवौ बिललात फिरै नित,
इद्रिनि कै बस छीलक छोलै ।
सिह नही अपनौ बल जानत,
जवुक ज्यौ जितही तित डोलै ।।
चेतनता बिसराइ निरतर,
लै जडता भ्रम गाठि न खोलै ।
सुन्दर भूलि गयौ निज रूप हि,
देह स्वरूप भयौ मुख बोलै ।।२३।।

मै सुखिया सुख सेज सुखासन,
है गय भूमि महा रजधांनी ।
हौ दुखिया दिन रैनि भरौ दुख,
मोहि विपत्ति परी नही छानी ।।

हौं अति उत्तम जाति बडौ कुल,
हौ अति नीच क्रिया कुल हानी ।
सुन्दर चेतनता न सभारत,
देह स्वरूप भयौ अभिमानी ॥२४॥

गर्भ विषै उतपत्ति भई पुनि,
जन्म लियौ शिशु सुद्धि न जानी ।
बाल कुमार किशौर जुवादिक,
बृद्ध भये अति बुद्धि नसानी ॥
जैसी ही भाति भई बपु की गति,
तैसौ ही होइ रह्यौ यहु प्रानी ।
सुन्दर चेतनता न सभारत,
देह स्वरूप भयौ अभिमानी ॥२५॥

ज्यौ कोऊ त्याग करै अपनौ घर,
बाहर जाइ कै भेष वनावै ।
मूड मुडाइ कै कान फराइ,
बिभूति लगाइ जटाऊ बधावै ॥
जैसौई स्वाग करै बपु कौ पुनि,
तैसौई मानि तिसौ व्है जावै ।
त्यौ यह सुन्दर आपु न जानत,
भूलि स्वरूप हि और कहावै ॥२६॥

॥ इति स्वरूप बिस्मरणको अंग सम्पूर्ण ॥

अथ सांख्य ज्ञांन को अंग ॥२५॥

मनहर छंद

क्षिति जल पावक पवन नभ मिलि करि,
शबद रु सपरस रूप रस गध जू ।
श्रोत्र त्वक चक्षु घ्रान रसना रस कौ ज्ञान,
वाक् पानि पाद पायु उपस्थ हि बध जू ॥
मन बुद्धि चित अहकार ये चौबीस तत,
पर्चबिश जीव तत करत है धध जू ।
षड विश कौ है ब्रह्म सुन्दर सु निहकर्म,
व्यापक अखड एक रस निरसध जू ।१॥
श्रोत्र दिक् त्वक् वायु लोचन प्रकाशै रवि,
नासिका अश्वनी जिन्हा बरुन वखानिये ।
वाक अग्नि हस्त इन्द्र चरन उपेन्द्र बल,
मेढ प्रजापति गुदा मित्र हू कौ ठानिये ॥
मन चन्द्र बुद्धि बिधि चित बासुदेव आहि,
अहकार रुद्र कौ प्रभाव करि मानिये ।

---

(१) क्षिति-पृथ्वी । पावक-तेज. अग्नि । पवन-वायु । नभ-आकाश । वाक्-वाणी । पानि-हाथ । पाद-वैर । पायु-मलेन्द्रिय । उपस्थ-मूत्रेन्द्रिय । पर्चविश-पचीसवा । पर्डविश-छव्वीसवा । निहकर्म-निष्कर्म । निरसध-सधि रहित-निरवयव ।

जाकी सत्ता पाइ सब देवता प्रकाशत है,
सुन्दर सु आतमा हि न्यारो करि जानिये ।२।।

इन्दव छन्द

श्रोत्र सुनै दृग देखत हैं,
रसना रस घ्रान सुगध पियारौ ।
कोमलता त्वक् जानत है पुनि,
बोलत है मुख शब्द उचारौ ।।
पानि ग्रहै पद गौन करै,
मल मूत्र तजै उभऊ अघ द्वारौ ।
जाके प्रकाश प्रकाशत हैं सब,
सुन्दर सोई रहै घट न्यारौ ।।३।।

बुद्धि भ्रमै मन चित्त भ्रमै,
अहकार भ्रमै कहा जांनत नाँही ।
श्रोत्र भ्रमै त्वक् घ्रान भ्रमै,
रसना दृग देखि दसौ दिसि जाही ।।
वाक् भ्रमै कर पाद भ्रमै,
गुदद्वार उपस्थ भ्रमै कहु काही ।
तेरे भ्रमाये भ्रमै सबही गुन,
सुन्दर तू क्यौ भ्रमै इन माहीं ।।४।।

---

(२) उपेन्द्र-विष्णु । मेढ-मेढ्र, उपस्थ । प्रजापति-ब्रह्मा । विधि-ब्रह्मा । वासुदेव-विष्णु । रुद्र-शकर ।

बुद्धि कौ बुद्धि रु चित्तको चित्त,
अह कौ अह मन कौ मन वोई ।
नैन कौ नैन है बैन कौ वैन है,
कान कौ कान त्वचा त्वक् होई ॥
घ्रान कौ घ्रान है जीभ कौ जीभ है,
हाथ कौ हाथ पगौं पग दोई ।
शीश कौ शीश है प्रान कौ प्रांन है,
जीव कौ जीवहै सुन्दर सोई ॥५॥

मनहर छंद (प्रश्न)

कसै कै जगत यह रच्यौ है जगतगुरु,
मौ सौ कहौ प्रथम ही कौन तत्व कीनौ है ।
प्रकृति कि पुरुष कि महत्तत अहकार,
किधौ उपजाये सत रज तम तीनौ है ॥
किधौ व्यौम वायु तेज आप कै अवनि कौन,
किधौ पच विषय पसारि करि लीनौ है ।
किधौ दस इन्द्री किधौ अन्तहकरन कीन,
सुन्दर कहत किधौं सकल विहीनौ है ॥६॥

उत्तर

ब्रह्म तै पुरुष अरु प्रकृति प्रगट भई,
प्रकृति तै महत्तत्त पुनि अहकार है ।
अहंकार हू तै तीन गुन सत रज तम,
तम हू तै महाभूत विषय पसार है ॥

रज हूं तैं इन्द्रिय दस पृथक पृथक भई,
सत हूं तैं मन आदि देवता विचार है।
ऐसैं अनुक्रम करि सिष्य सौ कहत गुरु,
सुन्दर सकल यह मिथ्या भ्रम जार है ॥७॥

प्रश्न ?

मेरौ रूप भूमि है कि मेरौ रूप आप है कि,
मेरौ रूप तेज है कि मेरौ रूप पौंन है ?
मेरौ रूप व्यौम है कि मेरौ रूप इन्द्रिय है कि,
अन्त करन है कि बैठौ है कि गौंन है ॥
मेरौ रूप त्रिगुन कि अहंकार महत्तत्त,
प्रकृति पुरुष किधौ बोलै है कि मौन है।
मेरौ रूप थूल है कि शुनि आहि मेरौ रूप,
सुन्दर पूछत गुरु मेरौ रूप कौन है ॥८॥

उत्तर

तूं तौ कछु भूमि नाहि आप तेज वायु नांहि,
व्यौम पच विषै नाहि सौ तौ भ्रम कूप है।
तू तौ कछु इन्द्रिय अरु अन्तहकरन नाहि,
तीनौ गुनहू तू नाहि सोऊ छाह धूप है॥
तूं तौ अहंकार नाहि पुनि महत्तत्त नाहि,
प्रकृति पुरुष नाहि तू तौ सु अनूप है।

---

(८) आप-जल। पौन-पवन, वायु। व्योम-आकाश। गौन-गमन।

सुन्दर बिचारि ऐसे सिष्य सौ कहत गुरु,
नांहि नाहि करतें रहै सु तेरौ रूप है ॥९॥
तेरौ तौ स्वरूप है अनूप चिदानद घन,
देह तौ मलोन जड या बिवेक कीजिये ।
तूं तौ बिहसंग निराकार अविनाशी अज,
देह तौ बिनाशवत ताहि नहिं धीजिये ॥
तू तौ षट उरमी रहित सदा एक रस,
देह के बिकार सब देह सिर दीजिये ।
सुन्दर कहत यौ बिचारि आपु भिन्न जानि,
पर की उपाधि कहा आप खैचि लीजिये ॥१०॥
देह ई नरक रूप दुख, कौ न वारपार,
देह ई स्वरग रूप झूठौ सुख मान्यौ है ।
देह ई कौ वध मोक्ष देह ई अप्रोक्ष प्रोक्ष,
देह ई के क्रिया कर्म शुभाशुभ ठान्यौ है ॥
देह ई मैं और देह, खुशी ह्वै बिलास करै,
ताहि कौं समुझि विन आतमा बखान्यौ है ।
दोऊ देह तें अलिप्त दौऊ कौ प्रकाशक है,
सुन्दर चैतन्य रूप न्यारौ कर जान्यौ है ॥११॥

(१०-११) षट् ऊर्मि-शीत-उष्ण, भूख-प्यास, सुख-दु.ख । प्रोक्ष परोक्ष । अप्रोक्ष-अपरोक्ष । दो देह-स्थूल, सूक्ष्म ।

देह हलै देह चलै देह ही सौं देह मिलै,
देह खाइ देह पीवै देह हो भरतु है।
देह ही हिमारै गरै, देह ही पावक जरै,
देह रन माँहि झूझै, देह ही परतु है॥
देह ही अनेक कर्म करत बिविध भांति,
चुबक की सत्ता पाइ लोह ज्यौं फिरतु है।
आतमा चेतनरूप व्यापक साक्षी अनूप,
सुन्दर कहत सो तौ जन्मै न मरतु है ॥१२॥

देह कौ न देह कछु देह कौ ममत्त छाडि,
देह तौ दमामा दीये देह देह जात है।
घट तौ घटत घरी घरी घट नाश होत,
घट के गये तें घट की न फेरि वात है॥
पिंड पिंड माहिं पिंड पिंड को उपावत है,
पिंड पिंड खात पुनि पिंड ही कौ पात है।
सुन्दर न होइ जासौं सुन्दर कहत जग,
सुन्दर चेतनरूप सुन्दर विख्यात है ॥१३॥

प्रश्नोत्तर

देह यह किनको है? देह पंच भूतन की,
पंच भूत कौन तें हैं? तामसाहंकार तें।
अहंकार कौन तें है? जाकौ महत्तत्त कहें,
महत्तत्त कौन तें हैं? प्रकृति मझार तें॥

प्रकृति हू कौन तै है ? पुरुष है जाकौ नाम,
पुरुष सु कौन तै है ? ब्रह्म निराधार तै ।
ब्रह्म अब जान्यौ हम, जान्यौ है तौ निश्चै कर,
निश्चै हम कियौ है तौ चुप मुख द्वार तै ।।१४।।
एक घट माहि तौ सुगध जल भरि राख्यौ,
एक घट माहि तौ दुर्गन्ध जल भर्यौ है ।
एक घट माहि पुनि गगोदक राख्यौ आन,
एक घट माहि आनि मदिराऊ कर्यौ है ।।
एक घृत एक तेल एक माहि लघुनीति,
सबही मैं सविता कौ प्रतिबिंब पर्यौ है ।
तैसै ही सुन्दर ऊच नीच मध्य एक ब्रह्म,
देह भेद देखि भिन्न भिन्न नाम धर्यौ है ।।१५।।
भूमि परै अप, अपहू कै परै पावक है,
पावक कै परै पुनि वायु हू बहुत है ।
वायु परै व्यौम व्यौम हू कै परै इन्द्रिय दस,
इन्द्रिनि कै पर अन्त.करन रहतु है ।।
अन्तहकरन परै तीनौ गुन अहकार,
अहकार परै महत्तत्त कौ लहतु है ।
महत्तत्त परै मूल माया, माया परै ब्रह्म,
ताहि तै परातपर सुन्दर कहतु है ।।१६।।

---

(१५) सविता-सूर्य । लघुनीति-पेशाव ।

(१६) परात्पर-सबसे परे, ऊपर ।

भूमि तौ विलीन गंध गंध हू विलीन आप,
आप हू बिलीन रस रस तेज खातु है ।
तेज रूप रूप वायु वायु हू सपर्श लीन,
सो सपर्श व्यौम शब्द तम हि विलातु है ।।
इन्द्रिय दस रज मन देवता बिलीन सत्व,
तीनि गुन अहं महत्तत्त्व गलि जातु है ।
महत्तत्त प्रकृति प्रकृति हू पुरुष लीन,
सुन्दर पुरुष जाय ब्रह्म मैं समातु है ।।१७।।
आतमा अचल शुद्ध एक रस रहै सदा,
देह बिवहारनि मैं देह ही सौ जानियें ।
जैसे शशि मंडल अभंग नहीं भंग होइ,
कला आवे जाहि घटि बढि सौ बखानियें ।।
जैसे द्रुम सुथिर नदी के तट देखियत,
नदी के प्रवाह माहि चलतौ सौ मानियें ।
तैसैं आतमा अतीत देह कौ प्रकाशक है,
सुन्दर कहत यौ बिचारि भ्रम भानियें ।१८।।
आतमा शरीर दोऊ एकमेक देखियत,
जब लग अन्तहकरन मैं अज्ञान है ।
जैसे अन्धियारी रैनि घर मैं अन्धेरौ होइ,
आखिनि कौ तेज ज्यौ कौ त्यौं ही विद्यमान है ।
जदपि अंधेरै माहि नैंन कौ न सूझै कछु,
तदपि अंधेरै तैं सौ अलिप्त बखानि है ।

सुन्दर कहत तौ जौं एक मेक जानत है,
जौ लौ नहि प्रगट प्रकाश ज्ञान भानु है ।।१९।।
देह जड देवल मैं आतमा चैतन्य देव,
याही कौ समुझि कर यासौ मन लाइये ।
देवल कौ बिनशत बार नहिं लागै कछु,
देव तौ सदा अभग देवल मैं पाइये ।।
देब की शकति कर देवल की पूजा होइ,
भोजन बिबिध भाति भोग हू लगाइये ।
देवल तै न्यारौ देव देवल मैं देखियत,
सुन्दर बिराजमान और कहा जाइये ।।२०।।

प्रीति सो न पाती कोऊ प्रेम से न फूल और,
चित्त सौ न चदन सनेह सौ न सेहरा ।
हृदै सौ न आसन सहज सौ न सिघासन,
भाव सी न सौज और मुनि सौ न गेहरा ।।
शील सौ सनान नाहि ध्यान सौ न धूप और,
ज्ञान सौ न दीपक अज्ञान तम के हरा ।
मन सी न माला कोऊ सोऽह सौ न जाप और,
आतमा सौ देव नाहि देह सौ न देहुरा ।।२१।।

---

(२०) देवल-देवालय, मन्दिर ।
(२१) देहुरा-देवालय, मन्दिर ।

श्वासै श्वास राति दिन सोह सोह होइ जाप,
याहि माला बार बार दिढकै धरतु है ।
देह परै इन्द्रिय परै अतहकरन परै,
एक ही अखड जाप ताप कौ हरतु है ।।
काठ की रुद्राक्ष की रु सूतहू की माला और,
इनकै फिरायै कान कारिज सरतु है ।
सुन्दर कहत तातै आतमा चेतनि रूप,
आपुकौ भजन सु तौ आपु ही करतु है ।।२२।।

क्षीर नीर मिलि दोऊ एकठे ई होइ रहे,
नीर छाडि हस जैसै क्षीर कौ गहतु है ।
कचन मैं और धात मिलि कर बान पर्यौ,
शुद्ध कर कचन सुनार ज्यौ लहतु है ।
पावक ह दारु मधि दारु ही सौ होइ रह्यौ,
मथि कर काढै सोई दारु कौ दहतु है ।
तैसै ही सुन्दर मिल्यौ आत्मा अनात्मा जू,
भिन्न भिन्न करिये सु साख्य यौ कहतु है ।।२३।।

अन्नमय कोश सु तौ पिड है प्रगट यह,
प्रानमय कोश पच वायु हू वखानिये ।
मनोमय कोश पच कर्म इन्द्रिय प्रसिद्ध,
पच ज्ञान इन्द्रिय विज्ञान कोश जानिये ।।
जाग्रत सुपन विषै कहि च्त्वार कोश,
सुषुपति माहि कोश आनदमय मानिये ।

पच कोश आतमा कौ जीव नाम कहियत,
सुन्दर शकर भाष्य साख्य यह आनिये ॥२४॥
जाग्रत अवस्था जैसे सदन मै बैठियत,
तहा कछु होइ ताहि भली भाति देखिये ।
स्वपन अवस्था जैसै ओवरे मै वैठे जाइ,
रहै रहै उहा हू की वस्तु सब लेखिये ॥
सुषुपति भौंहरे मै वैठे तै न सूझि परै,
महा अध घोर तहा कछू हू न पेखिये ।
व्यौम अनुसूत घर आवरे भौंहरे मैं,
सुन्दर साक्षी स्वरूप तुरिया विसेखिये ॥२५॥
जाग्रत कै विषै जीव नैननि मैं देखियत,
विविध व्यौहार सब इन्द्रिनि गहतु है ।
स्वपने हूं माहि पुनि वैसै ही व्यौहार होत,
नैननि तै आइ कर कठ मैं रहतु है ॥
सुषुपति हृदै मै बिलीन होइ जात जब,
जाग्रत स्वपन की तौ सुधि न लहतु है ।
तीनि हू अवसथा कौ साक्षी जब जानै आपु,
तुरिया स्वरूप यह सुन्दर कहतु है ॥२६॥

---

(२५) अनुसूत-अनुस्यूत, प्रविष्ट । तुरिया-तुरीय, चतुर्थ ।

इन्दव छन्द

जाग्रत रूप लिये सब तत्त्वनि,
इन्द्रिय द्वार करै व्यवहारी ।
स्वप्न शरीर भ्रमै नव तत्त्व कौ,
मानत है सुःख दुःख अपारौ ।।
लीन सबै गुन होत सुषुप्ति,
जानै नही कछु घोर अधारौ ।
तीनौ कौ साक्षी रहै तुरियातत,
सुन्दर सोई स्वरूप हमारौ ।।२७।

भूमि तै सूक्षिम आप कौ जानहु,
आप तै सूक्षिम तेज कौ अगा ।
तेज तै सूक्षम वायु बहै नित,
वायु तै सूक्षिम व्यौम उतगा ।।
व्यौम तै सूक्षिम है गुन तीनि,
तिन्हू तै अह महत्तत्त्व प्रसगा ।
ताहु तै सूक्षिम मूल प्रकृति जू,
मूलतै सुन्दर ब्रह्म अभगा ।।२८।।

ब्रह्म निरतर व्यापक अग्नि,
अरूप अखंडित है सब माही ।
ईश्वर पावक रासि प्रचड जू,
सग उपाधि लिये वर ताही ।

जीव अनंत मसाल चिराग सु,
दीप पतग अनेक दिखाँही ।
सुन्दर द्वैत उपाधि मिटै जब,
ईश्वर जीव जुदे कछु नाही ॥२९॥

ज्यौं नर पावक लौह तपावत,
पावक लौह मिले सु दिखाही ।
चोट अनेक परै घन की सिर,
लोह वधै कछु पावक नाही ॥
पावक लीन भयौ अपनै घर,
शीतल लौह भयौ तब ताही ।
त्यौं यह आतम देह निरतर,
सुन्दर भिन्न रहै मिलि माही ॥३०॥

आतम चेतनि शुद्ध निरतर,
भिन्न रहै कहु लिप्त न होई ।
है जड़ चेतनि अन्त करन जु,
शुद्ध अशुद्ध लिये गुन दोई ॥
देह अशुद्ध मलीन महा जड,
हालि न चालि सकै पुनि वोई ।
सुन्दर तीनि विभाग किये बिन,
भूलि परै भ्रमते सब कोई ॥३१॥

सवैया छंद

ब्रह्म अरूप अरूपी पावक,
व्यापक जगल न दीसत रग ।
देह दारु तै प्रगट देखियत,
अन्त करन अग्नि द्वय अग ॥
तेज प्रकाश कल्पना तौ लग,
जौ लग रहै उपाधि प्रसग ।
जह के तहा लोन पुनि होई,
सुन्दर दोऊ सदा अभग ॥३२॥
देह शराव तेल पुनि मारुत,
वाती अन्त करन विचार ।
प्रगट जोति यह चेतनि दीसै,
जातै भयौ सकल उजियार ॥
व्यापक अग्नि मथन कर जोये,
दीपक बहुत भाति बिस्तार ।
सुन्दर अद्‌भुत रचना तेरी,
तूं ही एक अनेक प्रकार ॥३३॥
तिल मै तेल दूध मैं घृत है,
दारु माहि पावक पहिचानि ।
पुहप माहि ज्यौ प्रगट बासना,
इक्षु माहि रस कहत बखानि ॥

(३३) शराव-शकोरा, मिट्टी का दीया ।

पोसत माहिं अफीम निरतर,
वनस्पती मैं सहृत प्रवानि ।
सुन्दर भिन्न मिल्यौ पुनि दीसत,
देह माहिं यौं आतम जानि ॥३४॥

जाग्रत स्वप्न सुषूपति तीनौं,
अन्त करन अवस्था पावैं ।
प्रान चलै जाग्रत अरु सुप्नें,
सुषुपति मैं पुनि अहनिसि धावैं ॥
प्रांन गये तैं रहै न कोऊ,
सकल देखता थाट विलावैं ।
सुन्दर आतम तत्त्व निरतर,
सौ तौ कतहू जाइ न आवैं ॥३५॥

पन्द्रह तत्व स्थूल कुम्भ मैं,
सुक्षिम लिग भर्यौ ज्यौ तोय ।
वहा जीव यहा आभा दीसै,
ब्रह्म इन्दु प्रतिबिवै दोय ॥
घट फूटै जल गयौ विलय ह्वै,
अन्तहकरन कहै नहि कोय ।
तब प्रतिविब मिलै शशि बिंबहि,
सुन्दर जीव ब्रह्ममय होय ॥३६॥

मनहर छंद

जैसे व्यौम कुम्भ कै बाहिर अरु भीतरहू,
 कोऊ नर कुम्भ कौ हजार कोस लै गयौ ।
ज्यौ ही व्यौम इहा त्यौही उहा पुनि है अखड,
 इहां न बिछौह न तौ उहा मिलाप है भयौ ।।
कुम्भ तौ नयौ पुरानौ होइ कै बिनशि जाइ,
 व्यौम तौ न व्है पुरांनौ न तौ कछु व्है नयौ ।
तैसै ही सुन्दर देह आवै रहै नाश होइ,
 आतमा अचल अविनाशी है अनामयौ ।।३७।।
देह कै सजौग ही तै शीत लगै घाम लगै,
 देह कै सजौग ही तै क्षुधा तृषा पौन कौं ।
देह कै सजौग ही तै कटुक मधुर स्वाद,
 देह कै सजौग कहै खाटौ खारौ लौन कौ ।।
देह कै सजौग कहै मुख तै अनेक बात,
 देह कै सजौग ही पकरि रहै मौन कौ ।
सुन्दर देह कै सग सुख मानै दुख मानै,
 देह कौ सजौग गयौ सुख दुख कौन कौं ।।३८।
आपु की प्रशसा सुनि आपु ही खुशाल होइ,
 आपु ही की निंदा सुनि आप मुरझाइ है ।
आपु ही कौं सुख मानि आपु सुख पावत है,
 आपु ही कौं दुख मानि आपु दुख पाइ है ।।

---

(३७) अनामयो-निर्विकार ।

आपु ही की रक्षा करै आपु ही की घात करै,
आपु ही हत्यारो होइ गगा जाइ न्हाइ है ।
सुन्दर कहत ऐसै देह ही को आपु मानि,
निज रूप भूलि कै करत हाइ हाइ है ॥३६॥

॥ इति सांख्य ज्ञान को अंग सम्पूर्ण ॥

अथ बिचार को अंग ॥२६॥

मनहर छंद

प्रथम श्रवन कर चित्त एकाग्र धरि,
गुरु सत आगम कहै सु उर धारिये।
दुतीय मनन बारबार -ही बिचार देखै,
जोई कछु सुनै ताहि फेरि कै सभारिये॥
त्रितिय ताही प्रकार निदिध्यास नीकै करि,
निहसग बिचरत आपुनपौ टारिये।
सो साक्षातकार याही साधन करत होइ,
सुन्दर कहत द्वैत बुद्धि कौ निवारिये॥१॥

देखै तौ बिचार कर सुनै तौ बिचार कर,
बोलै तौ बिचार कर करै तौ बिचार है।
खाइ तौ विचार कर पीवै तौ बिचार कर,
सोवै तौ बिचार कर तौ ही तौ ऊबार है॥
बैठै तौ बिचार कर उठै तौ बिचार कर,
चलै तौ बिचार कर सोई मत सार है।
देइ तो बिचार कर लेइ तौ बिचार कर,
सुन्दर विचार कर याही निरधार है॥२॥

---

(१) द्वैतबुद्धि-भेदभाव।

एक ही बिचार कर सुख दुख सम जानै,
एक ही विचार कर मल सब धोइ है।
एक ही विचार कर ससार समुद्र तिरैं,
एक हो विचार कर पारगत होइ है ॥
एक ही बिचार कर बुद्धि नाना भाव तजै,
एक ही बिचार कर दूसरौ न कोइ है।
एक ही बिचार कर सुन्दर सन्देह मिट,
एक ही बिचार कर एक ब्रह्म जोइ है ॥२॥

इन्दव छद

रूप कौ नाश भयौ कछु देखिये,
रूप तौ रूप ही माहिं समावै।
रूप कै मद्धि अरूप अखडित,
सौ तौ कहू कछु जाइ न आवै॥
बीच अज्ञान भयौ नव तत्त्व कौ,
वेद पुरान सबै कोऊ गावै।
सोऊ बिचार करै जब सुन्दर,
सोधत ताहि कहू नहिं पावै ॥४॥
भूमि सु तौ नही गध कौ छाडत,
नीर सु तौ रसतै नहि न्यारौ।
तेज सु तौ मिलि रूप रह्यौ पुनि,
वायु सपर्श सदा सु पियारौ॥

व्यौम रु शब्द जुदे नहिं होत सु,
ऐसें ही अंत करन बिचारौ ।
ये नव तत्त्व मिले इन तत्त्वनि,
सुन्दर भिन्न स्वरूप हमारौ ।।५।।

क्षीण रु पुष्ट शरीर कौ धर्म जु,
शीत हू ऊष्ण जरा मृतु ठानै ।
भूख तृषा गुन प्रान कौ व्यापत,
शोक रु मोह उभै मन आनै ।।
बुद्धि बिचार करै निशि बासरि,
चित्त चितै सु अहं अभिमानै ।
सर्व कौ प्रेरक सर्व कौ साक्षी हु,
सुन्दर आपु कौ न्यारौ ही जानै ।।६।।

एक ही कूप कै नीर तै सींचत,
ईख अफीम ही अंब अनारा ।
होत उहै जल स्वाद अनेकनि,
मिष्ट कटुक्क खटा अरु खारा ।।
त्यौं ही उपाधि सजोग तै आतम,
दीसत आइ मिल्यौ सु बिकारा ।
काढि लियें जु विचार बिवस्वत,
सुन्दर शुद्ध स्वरूप है न्यारा ।।७।।

रूप परा कौन जानि परै कछु,
ऊठत है जिहिं मूल तें छानी।
नाभि विषै मिलि सप्त स्वर हु,
पुरुष सजौग पश्यति बखानी॥
नाद सजौग हृदै पुनि कंठ जु,
मद्धिमा याही बिचारतें जानीं।
अक्षर भेद लिये मुख द्वार मु,
बोलत सुन्दर वैखरी वानीं॥८॥

ज्यौं कोऊ रोग भयौ नर कैं घट,
वैद कहै यह वायु विकारा।
कोऊ कहै ग्रह आइ लगे सब,
पुन्नि किये कछु होइ ऊबारा॥
कोऊ कहै इहिं चूक परी कछु,
देवनि दोप कियौ निरधारा।
तेसैं ही सुन्दर तत्रन के मत,
भिन्न ही भिन्न कहै जु विचारा॥९॥

जे विषया तम पूरि रहे,
तिनकौ रजनी महिं बादर छायौ।
कोऊ मुमुक्षु किये गुरुदेव,
तिन्है भय युक्त जु शब्द सुनायौ॥

बादर दूरि भये उनके पुनि,
तारनि सौ रजु सर्प दिखायौ।
सुन्दर सूर प्रकाशत हो भ्रम,
दूरि भयौ रजु कौ रजु पायौ ।।१०।।

कर्म शुभाशुभ की रजनी पुनि,
अर्ध तमोमय अर्ध उजारी।
भक्ति सु तौ यह है अरुणोदय,
अन्त निशा दिन सधि बिचारी ।।
ज्ञान सु भानु सदोदित बासुरि,
वेद पुरान कहैं जु पुकारी।
सुन्दर तीन प्रभाव बखानत,
यौ निहचै समुझै बिधि सारी ।।११।।

मनहर छद

देह ई कौ आपु मानि देह ई सौ होइ रह्यौ,
जडता अज्ञान तम शूद्र सोई जानिये।
इद्रिनि के व्यौपारनि अत्यन्त निपुन बुद्धि,
तमो रज दुहू करि वैश्य हू प्रमानिये ।।
अतहकरन माहि अहकार बुद्धि जाकै,
रजोगुन बर्धमान क्षत्री पहिचानिये।
सत्त्वगुन बुद्धि एक आतमा बिचार जाकै,
सुन्दर कहत यह ब्राह्मन वखानिये । १२।।

आतमा कै विषै देह आइ करि नाश होइ,
आतमा अखंड सदा एकई रहतु है।
जैसें साप कंचुकी कौं लिय रहै कौऊ दिन,
जीरन उतारि करि नूतन गहतु है।
जैसें द्रुम हू कै पत्र फूल फल आइ होत,
तिनकै गये तै द्रुम और हू लहतु है।
जैसे व्योम माहि अभ्र होइ कै बिलाइ जात,
ऐसौ सौ बिचार कछु सुन्दर कहतु है ॥१३॥

खरी कौ डरी सौ अंक लिखिकै विचारियत,
लिखित लिखित वह डरी घसि जात है।
लेखौ समुझ्यौ है जब समुझि परी है तब,
जोई कछु सही भयौ सोई ठहरात है।
दारु ही सौं दारु मथि पावक प्रगट भयौ,
वह दारु जारि पुनि पावक मैं समात है।
तैसें ही सुन्दर बुद्धि ब्रह्म कौ विचार कर,
करत करत वह बुद्धि हू बिलात है ॥१४॥

आपु कौं समुझि देखि आपु ही सकल माहि,
आपु ही मैं सकल जगत देखियतु है।
जैसें व्योम व्यापक अखंड परिपूरन है,
बादल अनेक नाना रूप लेखियतु है॥

(१३) अभ्र-बादल। द्रुम वृक्ष। कंचुकी-काचली।

जैसैं भूमि घट जल तरंग पावक दीप,
  वायु मैं वघूरा जैसैं विश्व रेखियतु है।
ऐसैं ही विचारत विचार हू बिलीन होइ,
  सुन्दर ही सुन्दर रहत पेखियतु है ॥१५॥

देह कौ सजौग पाइ जीव ऐसौ नाम भयौ,
  घट कै सजौग घटाकाश ज्यौं कहायौ है।
ईश्वर हू सकल विराट मैं विराजमान,
  मठ कै सजौग मठाकाश नाम पायौ है॥
महाकाश माहिं सब घट मठ देखियत,
  वाहिर भीतर एक गगन समायौ है।
तैसैं ही सुन्दर ब्रह्म ईश्वर अनेक जीव,
  त्रिविध उपाधि भेद ग्रन्थन मैं गायौ है ॥१६॥

देह दुख पावै किधौं इद्री दुख पावै किधौं,
  प्रान दुख पावै जब लहै न अहार कौं।
मन दुख पावै किधौं बुद्धि दुख पावै किधौं,
  चित्त दुख पावै किधौं दुख अहंकार कौं॥
गुन दुख पावै किधौं सूत्र दुख पावै किधौं,
  प्रकृति दुख पावै कि पुरुष आधार कौं।
सुन्दर पूछत कछु जानि न परत तातें,
  कौन दुख पावै गुरु कहौ या विचार कौं ॥१७॥

देह को तौ दुख नाहि देह पंच भूतनि को,
इन्द्रिनि कौ दुख नाहि दुख नाहि प्रान को ।
मन हू को दुख नाहि बुद्धि हू को दुख नाहि,
चित्त हू को दुख नाहि, नाहि अभिमान को ॥
गुननि कौ दुख नाहि सून हू कौ दुख नाहि,
प्रकृति को दुख नाहि दुख न पुमान को ।
सुन्दर विचार ऐसे सिष्य सौं कहत गुरु,
दुख एक देखियत बीच के अज्ञान को ॥१८॥

पृथवी भाजन अंग कानक कटक पुनि,
जल हू तरंग दोऊ देखिके बखानिये ।
कारन कारज ये तौ प्रगट ही स्थूल रूप,
ताहि ते नजर माहि देखि करि आनिये ॥
पावक पवन व्योम ये तौ नहि देखियत,
दीपक बघूरा अभ्र प्रत्यक्ष प्रमानिये ।
आतमा अरूप अति सूक्षम तें सूक्षम है,
सुन्दर कारन तातें देह मैं न जानिये ॥१९॥
जैन मत उहै जिनराज कौ न भूलि जाइ,
दान तप शील साची भावना तें तरिये ।
मन वच काय शुद्ध सबसौं दयालु रहै,
दोष बुद्धि दूर करि दया उर धरिये ॥

जोध नाम तब जब मन को निरोध होइ,
  वोध को बिचार शौच आतमा को करिये ।
सुन्दर कहत ऐसें जीवत ही मुक्त होइ,
  मूये तें मुकति कहै तिनको परिहरिये ।।२०।।

योगी जागै योग साधि भोगी जागै भोग रत,
  रोगी जागै दुख माहि रोग की उपाधि मैं ।
चोर जागै चोरी कों पहरू जागै राखिवे कों,
  निरधन जागै धन पाइबे की व्याधि मैं ।।
दिवाली की राति जगै मन्त्रवादी मन्त्र जपि,
  क्यों ही मेरो मन्त्र फुरै देखो मन्त्र साधि मैं ।
बिबिध उपाइ करि जागत जगत सब,
  सोवै सुख सुन्दर सहज की समाधि मैं ।।२१।।

योगी तू कहावै तो तू याही योग कों बिचारि,
  आतमा कों जोरि परमातमा ही जानिये ।
सन्यासी कहावै तो तू देह को सन्यास करि,
  बाहिर भीतरि एक ब्रह्म पहिचानिये ।।
जगम कहावै तो तू एक शिव ही कों देखि,
  थावर जगम सब द्वैत भ्रम भानिये ।
जैनी तू कहावै तो तू दोष बुद्धि दूर करि,
  सुन्दर कहत जिनराज उर आनिये ।।२२।।

जती तूं कहावै तौ तू एक या जतन करि,
याही जत नीकौ एक आतमा कौं हेरिये ।
तपसी कहावै तौ तू एक याही तप साधि,
याही तप नीकौ मन इन्द्रीन कौं घेरिये ॥
भक्त तूं कहावै तौ तू निस एक ठौर आनि,
स्वासै स्वास सोहं जाप याही माला फेरिये ।
संयमी कहावै तौ तूं एक या संयम करि,
सुन्दर कहत देह आतमा निर्वेरिये । २३॥

ब्राह्मन कहावै तौ तूं ब्रह्म कौ विचार कर,
सत्त रज तम तीनौ ताग तोरि डारिये ।
पंडित कहावै तौ तू याही एक पाठ पढ़ि,
अंत वेद मैं कह्यौ जू ताहि कौं विचारिये ॥
ज्यौतिषी कहावै तौ तू ज्यौति कौ प्रकाश कर,
अंतहकरन अंधकार कौ निवारिये ।
आगमी कहावै तौ तू अगम ठौर कौं जानि,
सुन्दर कहत याही अनुभव धारिये ॥२४॥

ब्राह्मन कहावै तौ तू आपु ही कौं ब्रह्म जानि,
अति ही पवित्र सुख सागर मैं न्हाइये ।
क्षत्री तू कहावै तौ तू प्रजा प्रतिपाल कर,
शीश पर एक ज्ञान छत्र कौ फिराइये ॥

वैश्य तू कहावै तौ तू एक ही व्यापार जानि,
आतमा कौ लाभ सोई अनायास पाइये ।
शूद्र तू कहावै तौ तू शूद्र देह त्याग कर,
सुन्दर कहत निज रूप मैं समाइये ।।२५।।
ब्रह्मचारी होइ तो तू वेद को बिचार देखि,
ताहि कौ समुझि जोई कह्यौ वेद अत है ।
गृही तू कहावै तौ तू सुमति त्रिया कौ व्याहि,
जाकै ज्ञान पुत्र होइ ऊही भाग्यवत है ।।
वानप्रस्थ होइ तौ तू काया वनवास करि,
कर्म कद मूल खाहि फल हू अनन्त है ।
सन्यासी कहावै तौ तू तीनो लोक न्यास करि,
सुन्दर परमहस होइ या सिधत है । २६।।
रामानदी होइ तौ तू तुच्छानन्द त्याग करि,
राम नाम भज रामानन्द ही कौ ध्याइये ।
निंबाद्वैती होइ तौ तू कामना कटुक त्याग,
अमृत कौ पान कर अधिक अघाइये ।।
मध्वाचारी है तौ तू मधुर कौ बिचार,
मधुर मधुर धुनि हृदै मधि गाइये ।
विष्णु स्वामी होइ तौ तू व्यापक बिष्णु कौ जान,
सुन्दर बिष्णु कौ भजि बिष्णु मैं समाइये ।।२७।।

देह और देखिये तौ देह पच भूतन कौ,
ब्रह्मा अरु कीट लग देह ही प्रधान है।
प्रान ओर देखिये तौ प्रान सबही कौ एक,
क्षुधा पुनि तृषा दोऊ व्यापत समाँन है।।
मन ओर देखिये तौ मन कौ स्वभाव एक,
सकल्प विकल्प करि सदा ई अज्ञान है।
आतमा बिचार किये आतमा ई दीसै एक,
सुन्दर कहत कोऊ दूसरौ न आन है।।२८।।

।। इति विचार को अंग सम्पूर्ण ।।

अथ ब्रह्म निष्कलंक को अंग

।।२७।।

एक कोऊ दाता गाय ब्राह्मन कौ देत दान,
  एक कोऊ दयाहीन मारत निशक है।
एक कोऊ तपस्वी तपस्या माँहि सावधान,
  एक कोऊ कामी क्रीडै कामिनी के अक है ।।
एक कोऊ रूपवत अधिक विराजमान,
  एक कोऊ कोढी कोढ चूवत करक है।
आरसी मैं प्रतिबिब सबही कौ देखियत,
  सुन्दर कहत ऐसे ब्रह्म निष्कलक है ।।१।।
रवि कै प्रकाश तै प्रकाश होत नेत्रनि कौ,
  सब कोऊ शुभाशुभ कर्म कौ करतु है।
कोऊ यज्ञ दान जप तप यम नेम ब्रत,
  कोऊ इद्रिय बसि कर ध्यॉन कौ धरतु है ।।

---

(२) परदारा-पराई स्त्री ।

कोऊ परदारा पर धन कौं तकत जाइ,
कोऊ हिंसा करकै उदर की भरतु है।
सुन्दर कहत ब्रह्म साक्षी रूप एकरस,
वाही मैं उपज कर वाही मैं मरतु है। २॥

जैसैं जल जंतु जल ही मैं उतपन्न होहि,
जल ही मैं विचरत जल के आधार है।
जल ही मैं क्रीडत विविध विवहार हत,
काम क्रोध लोभ मोह जन्म मैं सहार है॥
जल कौं न लागै कछु जीवन के राग द्वेष,
उनही के क्रिया कर्म उन ही की लार है।
तैसैं ही सुन्दर यह ब्रह्म मैं जगत सब,
ब्रह्म कौ न लागै कछु जगत विकार है॥३॥

स्वदेज जरायुज अंडज उदभिज पुनि,
चारि खानि तिनकै चौरासी लख जंत है।
जलचर थलचर व्यौमचर भिन्न भिन्न,
देह पंचभूतन की उपजि खपत है॥

शीत घाम पवन गगन मैं चलत आइ,
    गगन अलिप्त जा मैं मेघ हू अनत हैं।
तैसै ही सुन्दर यह सृष्टि एक ब्रह्म माहिं,
    ब्रह्म नि कलक सदा जानत महत है ।।४।।

।। इति ब्रह्म निष्कलंक को अग सम्पूर्ण ।।

---

(४) महत-उच्च श्रेणी के ज्ञानी पुरुष। स्वेदज-ऊष्मा से पैदा होने वाले प्राणी। जरायुज-जेर से निकलने वाले प्राणी। अडज-अडे से निकलने वाले। उदभिज-जमीन मे से निकलने वाले।

अथ आतम अनुभव को अंग
॥२८॥

इन्दव छन्द

है दिल मैं दिलदार सही,
　　अंखिया उलटी कर ताहि चितइये ।
आब मैं खाक मैं बाद मैं आतस,
　　सुन्दर जानि मैं जानि जनइये ॥
नूर मैं नूर है तेज मैं तेज है,
　　ज्योति मैं ज्योति मिलै मिल जइये ।
क्या कहिये कहतैं न बनै कछु,
　　जौ कहिये कहतैं हि लजइये ॥१॥

जासौ कहू सब मैं वह एक सौ,
　　तौ कहै कैसौ है आखि दिखइये ।
जौ कहू रूप न रेख तिसै कछु,
　　तौ सब झूठ कै मानि कहइये ॥
जौ कहू सुन्दर नैननि माझि,
　　तौ नैनहू बैन गये पुनि कहइये ।
क्या कहिये कहते न बनै कछु,
　　जौ कहिये कहते ही लजइये ॥२॥

---

(१) दिलदार-प्रियतम, परमेश्वर । आब पानी । खाक-पृथ्वी । बाद-वायु । आतस-अग्नि, तेज ।

होत बिनोद जु तौ अभिअ्रतरि,
सो सुख आपु मैं आपु ही पइये ।
बाहिर कौ उमग्यौ पुनि आवत,
कठ तै सुन्दर फेरि पठइये ।।
स्वाद निबेरै निबेर्यौ न जात,
मनौ गुड गू गे हि ज्यौं नित खइये ।
क्या कहिये कहते न बनै कछु,
जौ कहिये कहतै ही लजइये ।। ।।

व्यौम सौ सौम्य अनत अखडित,
आदि न अत सु मध्य कहा है ।
को परिमान करै परिपूरन,
द्वैत अद्वैत कछू न जहा है ।।
कारन कारज भेद नही कछु,
आपु मैं आपु ही आपु तहा है ।
सुन्दर दीसत सुन्दर माहि सु,
सुन्दरता कहि कौन उहा है ।।४।।

---

(३) अभिअन्तर-भीतर ।

(४) व्योम-आकाश । सोम्य-व्यापक । कारज-कार्य ।

प्रश्नोत्तर

एक कि दोइ न एक न दोइ,
उही कि इही न उही न इही है।
शून्य कि थूल न शून्य न थूल,
जही कि तही न जही न तही है ।।
मूल कि डाल न मूल न डाल,
वही की मही न वही न मही है।
जीव कि ब्रह्म न जीव न ब्रह्म,
तौ है कि नही कछु है न नही है ।।५।।

एक कहूं तौ अनेक सौ दीसत,
एक अनेक नही कछु ऐसौ।
आदि कहूं तिहि अंतहू आवत,
आदि न अंत न मध्य सु कैसौ ।।
गोपि कहूं तौ अगोपि कहा यह,
गोपि अगोपि न ऊभौ न वैसौ।
जोइ कहूं सोइ है नही सुन्दर,
है तौ सही पर जैसौ कौ तैसौ ।।६।।

मनहर छंद

एक कै कहै जौ कोऊ एक ही प्रकाशत है,
दोइ कै कहे जौ कोऊ दूसरौ ऊ देखिये।

(६) गोपि-गुप्त, गोपनीय।

अनेक कहै जौ कोऊ अनेक आभासै ताहि,
जाकै जैसौ भाव ताकौ तैसौ ई बिसेखिये ।।
बचन बिलास कोऊ कैसै ही बखान कहौ,
व्यौम माहिं चित्र कहू कैसे करि लेखिये ।
अनुभै किये तैं एक दोइ न अनेक कछु,
सुन्दर कहत ज्यौ है त्यौ ही ताहि पेखिये ।७।।

बचन ई बेदबिधि बचन ई शास्त्र पुनि,
बचन ई स्मृति अरु बचन पुरान जू ।
बचन ई और ग्रन्थ बचन ई व्याकरन,
बचन ई काव्य छद नाटक बखान जू ।।
बचन ई ससकृत बचन ई पराकृत,
बचन ई भाषा सब जगत मैं जान जू ।
बचन कै परै सु बचन माहि आवै नाहि,
सुन्दर कहत वह अनुभौ प्रमान जू ।।८।।

इन्द्रिय नहिं जानि सकै अल्प ज्ञान इन्द्रीन कौ,
प्रान हू न जानि सकै श्वास आवै जाइ है ।
मन हू न जानि सकै सकल्प विकल्प करै,
बुद्धि हू न जानि सकै गुनि सौ वताइ है ।।
चित्त अहकार पुनि दोऊ नहि जानि सकै,
शब्द हू न जानि सकै अनुमान पाइ है ।
सुन्दर कहत ताहि कोऊ नहि जानि सकै,
दीवा कर देखिये सु ऐसी नहिं लाइ है ।।९।।

इन्दव छंद

श्रोत्र न जानत चक्षु न जानत,
जानत नाहि जु सूझत घ्रानै ।
ताहि सपर्श तुचा न सकै पुनि,
जानत नाहि न जीभ वखानै ॥
ना मन जानत बुद्धि न जानत,
चित्त अहं कहि क्यौ पहिचानै ।
शब्द हु सुन्दर जानि सकै नहि,
आतमा आपुकौ आपु ही जानै ॥१०॥

सूर के तेज तै सूरज दीसत,
चंद के तेज तै चंद उजासै ।
तारे के तेज तै तारे उ दीसत,
बीजुरि तेज तै बिज्जु चकासै ॥
दीप के तेज तै दीपक दीसत,
हीरे के तेज तै हीरौ ऊ भासै ।
तैसै ही सुन्दर आतम जानहु,
आपु के तेजतै आपु प्रकासै ॥११॥

कोउ कहै यह सृष्टि सुभाव तै,
कोउ कहै यह कर्म तै सृष्टी ।
कोउ कहै यह काल उपावत,
कोउ कहै यह ईश्वर तिष्टी ॥

कोउ कहै यह ऐसैं ही होत है,
क्यौं कर मानियें बात अनिष्टीं ।
सुन्दर एक कियें अनुभै बिनु,
जान सकै नहिं बाहिर दृष्टि ।।१२।।

कोउ तौ मोक्ष अकास बतावत,
को कहै मोक्ष पताल के माहीं ।
कोउ तौं मोक्ष कहे पृथवी पर,
कोउ कहै कहु और कहा ही ।।
कोउ बतावत मोक्ष शिला पर,
को कहै मोक्ष मिटै पर छाही ।
सुन्दर आतम के अनुभै बिनु,
और कहूं कोउ मोक्ष ही नाही ।।१३।।

मूये तें मोक्ष कहै सब पण्डित,
मूये तें मोक्ष कहै पुनि जैना ।
मूये तें मोक्ष कहै रिषि तापस,
मूये तें मोक्ष कहैं शिव सैना ।।

---

(१२) ईश्वर तिष्टी-ईश्वर निर्मित । अनिष्टी-
तुचित । (१३) मोक्ष शिला-जैन सम्प्रदाय मे अभिमत
न्च अवस्था ।

सूये तै मोक्ष मलेच्छ कहैं,
तेऊ धोखे ही धोखे बखानत बैना ।
सुन्दर आतम कौ अनुभै सोई,
जीवत मोक्ष सदा सुख चैना ।।१४।।

जाग्रत तौ नहि मेरे विषै कछु,
स्वप्न सु तौ नहि मेरे विखै है ।
नाहि सुषूपति मेरे विषै पुनि,
विश्व हु तैजस प्राज्ञ परै है ।।
मेरे विषै तुरिया नहि दीसत,
याही तै मेरो स्वरूप अखै है ।
दूर तैं दूर परै तै परै अति,
सुन्दर कोउ न मोहि लखै है ।।१५।।

मनहर छन्द

कोउ तौ कहत ब्रह्म नाभि के कवल मधि,
कोउ तौ कहत ब्रह्म हृदै मैं प्रकास है ।
कोउ तौ कहत कंठ नासिका कै अग्रभाग,
कोउ तौ कहत ब्रह्म भृकुटी मैं वास है ।।

---

(१४) शिवसैना-शैव-सम्प्रदाय । मलेच्छ-मुस्लिम सम्प्रदाय ।

कोउ तौ कहत ब्रह्म दसवें द्वार के बीच,
कोउ तौ कहत भौंर गुफा में निवास है ।
पिंड तें ब्रह्माण्ड तें निरतर विराजै ब्रह्म,
सुन्दर अखंड जैसें व्यापक आकाश है ॥१६॥

पाव जिनि गह्यौ सु तौ कहत है ऊखर सौ,
पूंछ जिनि गही तिन लाव सौं सुनायौ है ।
सूंडि जिन गही तिन दगली की बाह कह्यौ,
दंत जिन गह्यौ तिन मूसर दिखायौ है ॥
कान जिन गह्यौ तिन सूप सौ बनाइ कह्यौ,
पीठ जिन गही तिन पिटोरा बतायौ है ।
जैसौ है सु तैसौ ताहि सुन्दर मयाखौ जांनै,
आधरैनि हाथी देखि झगरा मचायौ है ॥१७॥

न्याय शास्त्र कहत है प्रगट ईश्वर वाद,
मीमासक शास्त्र महि कर्मवाद कह्यौ है ।
वैशेषिक शास्त्र पुनि कालवादी है प्रसिद्ध,
पातजली शास्त्र महि योगवाद लह्यौ है ॥
साख्य शास्त्र माहि पुनि प्रकृति पुरुष वाद,
वेदान्त शास्त्र तिनहि ब्रह्मवाद गह्यौ है ।
सुन्दर कहत षट् शास्त्र माहि भयौ वाद,
जाकै अनुभव ज्ञान वाद मैं न बह्यौ है ॥१८॥

---

(१६) पिंड-शरीर ।

'प्रज्ञानमानन्द ब्रह्म' ऐसै ऋग्वेद कहत,
  'अहं ब्रह्म अस्मि' इति यजुर्वेद यौं कहै ।
'तत्वमसि' इति सामवेद यौं बखानत है,
  'अयमात्मा ब्रह्म' वेद अथरवन लहै ।।
एक एक बचन मैं तीन पद है प्रसिद्ध,
  तिनकौ बिचार कर अर्थ तत्व कौ गहै ।
चारि वेद भिन्न भिन्न सबकौ सिद्धांत एक,
  सुन्दर समुझि कर चुपचाप ह्वै रहै ।।१९।।

इन्द्रिनि के भोग जब चाहै तब आइ रहै,
  नाशवंत तातैं तुच्छानन्द यौं सुनायौ है ।
देवलोक इन्द्रलोक विधिलोक शिवलोक,
  वैकुण्ठ कै सुख लौं गलीतानंद गायौ है ।।
अक्षय अखंड एकरस परिपूरन है,
  ताहि तैं पूरनानंद अनुभैं तैं पायौ है ।
याही कै अन्तरभूत आनंद जहां लौं और,
  सुन्दर समुद्र माहि सर्व जल आयौ है ।।२०।।

एक तौ माया विलास जगत प्रपञ्च यह,
  चारि खानि भेद पाइ द्वैत भास रह्यौ है ।
दूसरौ विषै विलास इन्द्रिनि कै विषै पंच
  शब्द हू स्पर्श रूप रस गंध,

तीजौ वाचिक विलास सु तौ सब बेदौ माहि,
बरनि कै जहा लग बचन तै कह्यौ है ।
चौथौ ब्रह्म कौ विलास तिहू कौ अभाव जहा,
सुन्दर कहत वह अनुभै तै लह्यौ है ।।२१।।

जीवत ही देवलोक जीवत ही इन्द्रलोक,
जावत ही जन तप सति लोक आयौ हे ।
जीवत ही बिधि लोक जीवत ही शिव लोक,
जीवत बैकुण्ड लोक जो अकुण्ठ गायौ है ।।
जीवत ही मोक्षशिला जीवत ही भिस्त माहि,
जीवत ही निकट परम पद पायौ है ।
आतमा कौ अनुभव जिनकौ जीवत भयौ,
सुन्दर कहत तिन सशय मिटायौ है ।।२२।

इच्छा ही न प्रकृति न महत्तत्त अहकार,
त्रिगुन न व्यौम आदि शब्दादि न कोइ है ।
श्रवणादि बचनादि देवता न मन आदि,
सूक्षिम न स्थूल पुनि एक ही न दोइ है ।।

---

(२१) मायाविलास-माया का खेल या निर्माण । प्रपच-विस्तार ।

(२२) सति-सत्य । भिस्त-बहिस्त, स्वर्ग ।

स्वेदज न अंडज जरायुज न उदभिज,
पशु ही न पखी ही न पुरुष ही न जोइ है ।
सुन्दर कहत ब्रह्म ज्यौं कौ त्यौ ही देखियत,
न तौ कछु भयौ अब है न कछु होइ है ।।२३।।
क्षिति भ्रम जल भ्रम पावक पवन भ्रम,
व्यौम भ्रम तिनकौ शरीर भ्रम मानिये ।
इन्द्रिय दस तेऊ भ्रम अन्तहकरन भ्रम,
तिनहू के देवता सु भ्रम तें बखानिये ।।
सत्व रज तम भ्रम पुनि अहंकार भ्रम,
महत्तत्त प्रकृति पुरुष भ्रम भानियें ।
जोई कछु कहिये सु सुन्दर सकल भ्रम,
अनुभैं किये तें एक आतमा ही जानियें ।।२४।।
भूमि हू विलीन होइ आप हू विलीन होइ,
तेज हू विलीन होइ बायु जो वहतु है ।
व्यौम हू विलीन होइ त्रिगुन विलीन होइ,
शब्द हू विलीन होइ अहं जो कहतु है ।।

---

(२३) त्रिगुण-सत्व, रज,तम । स्वेदज-ऊष्मा से पैदा होने वाले जीव, दीमक, जू आदि । अण्डज-अण्डे से पैदा होने वाले जीव, चिडिया, मोर, कबूतर आदि । जरायुज-जेर से लिपटे हुए पैदा होने वाले जीव, मनुष्य पशु आदि । उदभिज्ज-जमीन से निकलने वाले पेड़ पौधे ।

(२४) भ्रम-माया जन्य, असत्य ।

महत्तत्त लीन होइ प्रकृति बिलीन होइ,
पुरुष बिलीन होइ देह जो गहतु है।
सुन्दर सकल जो जो कहिये सु लीन होइ,
आतमा के अनुभव आतमा रहतु है ।।२५।।

माया को अपेक्षा ब्रह्म रात्रि की अपेक्षा दिन,
जड की अपेक्षा करि चेतनि बखानिये।
अज्ञान अपेक्षा ज्ञान बध की अपेक्षा मोक्ष,
द्वैत की अपेक्षा सो तो अद्वैत प्रमानिये।
दुख की अपेक्षा सुख पाप को अपेक्षा पुनि,
झूठ की अपेक्षा ताहि सति कर मानिये।
सुन्दर सकल यह बचन बिलास भ्रम,
वचन ऊ अबचन रहित सोई जानिये ।।२६।।

आतमा कहत गुरु शुद्ध निरबध नित्य,
सत्य कर मानै सु तौ शब्द हू प्रमान है।
जैसे ब्योम ब्यापक अखड परिपूरन है,
ब्योम उपमा तै उपमान सो प्रमान है ।।
जाकी सत्ता पाइ सब इन्द्रिय चेतन होइ,
याही अनुमान तें अनुमॉन हू प्रमान है।
अनुभव जानै तब सकल सदेह मिटै,
सुन्दर कहत यह प्रत्यक्ष प्रमान है ।।२७।।

---

(२५) पुरुष-जीवात्मा।

(२७) निरबध-बधन रहित। सत्ता-आश्रय।

एक घर दोइ घर तीन घर चार घर,
पच घर तजै तव छठौ घर पाइ है ।
एक एक घर कै आधार एक एक घर,
एक घर निराधार आपु ही दिखाइ है ।।
सौ तौ घर साक्षीरूप घर घर मैं अनूप,
ताहू घर मधि कोऊ दिन ठहराइ है ।
ताकै परं साक्षी न असाक्षी न सुन्दर कछु,
वचन अतीत कहू आइ है न जाइ है ।।२८।।

एक तौ श्रवन ज्ञान पावक ज्यौ देखियत,
माया जल वरसत वेगि वूझि जातु है ।
एक है मनन ज्ञान विजुरि ज्यौ घन मधि,
माया जल वरसत तामैं न वुझातु है ।
एक निदिध्यास ज्ञान वडवा अनल सम,
प्रगट समुद्र माहि माया जल खातु है ।
आत्मा अनुभव ज्ञान प्रलय अगनि जैसे,
सुन्दर कहत द्वैत प्रपच बिलातु है ।।२९।।

---

(२८) घर-शरीर आदि का घेरा, पञ्च कोप ।

(२९) पावक-अग्नि, आग । विजुरि-बिजली । घन-वादल । वडवा अनल-समुद्र की अग्नि । प्रपच-विस्तार ।

चकमक ठोके तै चमतकार होत कछु,
ऐसौ है श्रवन ज्ञान तवही लौ जानिये ।
कफमन लागै जब प्रगटै पावक ज्ञान,
सिलगत जाइ वह मनन बखानिये ॥
वर्धमान भये काठ कर्मनि जरावत है,
वह निदिध्यास ज्ञान ग्रथनि मैं गानिये ।
सकल प्रपच यह जारि कै समाइ जात,
सुन्दर कहत वह अनुभै प्रमानिये ॥३०॥

भोजन की बात सुनि मन मैं मुदित होत,
मुख मैं न परै जौ लौ मेलिये न ग्रास है ।
सकल सामग्री आनि पाक कौ करन लाग्यौ,
मनन करत कब जीमू यह आस है ॥
पाक जब भयौ तब भोजन करन बैठौ,
मुख मैं मेलत जाइ उहै निदिध्यास है ।
भोजन परन करि तृपत भयौ है जब,
सुन्दर साक्षानकार अनुभै प्रकास है ॥३१॥

श्रवन करत जब सबसौ उदास होइ,
चित्त एकागर आनि गुरु मुख सुनियै ।

(३०) कफमन-कपास, रूई ।

बैठि कै एकत ठौर अतहकरन माहि,
मनन करत फेरि उहै ज्ञान गुनिये ।।
ब्रह्म अपरोक्ष जानि कहत है अह ब्रह्म,
सोह सोह होइ सदा निदिध्यास धुनिये ।
इहै अनुभव इहै कहिये साक्षातकार,
सुन्दर पालै तै गलि पानी होइ मुनिये ।।३२।।
जब ही जिज्ञास होइ चित एक ठौर आनि,
मृग ज्यौ सुनत नाद श्रवन सो कहिये ।
जैसे स्वाति बूद हू कौ चातक रटत पुनि,
ऐसै ही मनन करै कब बूद लहिये ।।
जैसे रात्रि हू चकोर चद्रमा कौ धरै ध्यान,
ऐसे जानि निदिध्यास दृढ करि ग्रहिये ।
सुन्दर साक्षातकार कीट जैसे होइ भृग,
उहै अनुभव उहै स्वस्वरूपर हिये ।।३३।।
काहू कौ पूछत रक धन कैसै पाइयत,
कान दे कै सुनत श्रवन सोई जानिये ।
उन कह्यौ धन हम देख्यौ है फलानी ठौर,
मनन करत भयौ कब घर आनिये ।।

---

(३२) एकागर-एकाग्र ।

(३३) जिज्ञास-जिज्ञासा ।

फेरि जब कह्यौ धन गड्यौ तेरे घर माहि,
खोदन लग्यौ है तब निदिध्यास ठानिये ।
धन निकस्यौ है जब दरिद्र गयौ है तव,
सुन्दर साक्षातकार नृपति बखानिये ।।३४।

।। इति आतम अनुभव को अंग सम्पूर्ण ।।

अथ ज्ञांनी को अंग ॥२९॥

इन्दव छंद

जाकै हृदै महिं ज्ञान प्रकासत
ताको सुभाव रहै नहिं छानौ ।
नैन मैं बैन मैं सैन मै जानिये,
ऊठत बैठत है अलसानौ ।
ज्यौ कछ भक्ष किये उदगारत,
कैसैं हुं राखि सकै न अघानौ ।
सुन्दरदास प्रसिद्धि दिखावत,
धान को खेत पयार तै जानौ ॥१॥

ज्ञान प्रकाश भयौ जिनकै उर,
वे घट क्यूं हि छिपे न रहैगे ।
भोडल माहिं दुरै नहि दीपक,
यद्यपि वे मुख मौन गहेगे ॥
ज्यूं घनसार हि गौपि छिपावत,
तौहि सुगंधि सु तज्ञ लहैगे ।
सुन्दर और कहा कोऊ जानत,
वूठे को बात बटाऊ कहैगे ॥२॥

---

(१) पयार-पयाल, चावल का डंठल ।

(२) घनसार-कपूर । तज्ञ-तत्वज्ञ, समझने वाले । दुरै-छिपता है । वूठेकी-यात्री की ।

बोलत चालत बैठत ऊठत,
पीवत खातहु सूघत श्वासै ।
ऊपरि तौ ब्यवहार करै सब,
भीतर स्वप्न समान सौ भासै ।।

लै कर तीर पताल कौ साधत,
मारत है पुनि फेरि अकासै ।
सुन्दर देह क्रिया सब देखत,
कोऊ न पावत ज्ञानी को आशै ।।३।।

वैठै तौ वैठै चलै तौ चलै पुनि,
पीछै तौ पीछै हि आगै तौ आगै ।
वोलैतौ वोलै न वोलैतौ मौनहि,
सोवै तौ सोवै रु जागै तौ जागै ।।

खाइ तौ खाइ नही तौ नही जु,
ग्रहै तौ ग्रहै अरु त्यागै तौ त्यागै ।
सुन्दर ज्ञानी की ऐसी दशा यह,
जानै नही कछु राग विरागै ।।४।।

---

(३) आशै-आशय, भाव, अभिप्राय ।

देखत है पै कछू नहीं देखत,
बोलत है नहीं बोल बखानै ।
सूंघत है नहीं सूंघत घ्रान,
सुनै सब है न सुनै यह मानै ॥
भक्ष करै अरु नाहि भखै कछु,
भेटत है नहि भेटत प्रानै ।
लेत है देत है देत न लेत है,
सुन्दर ज्ञानी की ज्ञानी ही जानै ॥५॥

काज अकाज भलौ न बुरौ कछु,
उत्तम मद्धिम दृष्टि न आवै ।
कायिक वाचिक मानस कर्म सु,
आपु विषै न तिन्है ठहरावै ॥
हौ करि हौ न कियौ न करौ अब,
यौ मन इंद्रिनि कौ बरतावै ।
दीसत है विवहार विषै नित,
सुन्दर ज्ञानी को कोउ न पावै ॥६॥

देखत ब्रह्म सुनै पुनि ब्रह्म हि,
बोलत है सोऊ ब्रह्म हि बानी ।
भूमि हु नीर हु तेज हु वायु हु,
व्यौम हु ब्रह्म जहां लगि प्रानी ॥

आदि हु अंति हु मधि हु ब्रह्म हि,
　　है सब ब्रह्म इहै मति ठानी ।
सुन्दर ज्ञेय रु ज्ञान हु ब्रह्म हि,
　　आपु हु ब्रह्म हि जानत ज्ञानी ॥७॥
ऊठत केवल बैठत केवल,
　　बोलत केवल बात कही है ।
जागत केवल सोवत केवल,
　　जोवत केवल दृष्टि लही है ॥
भूत हु केवल भावि हु केवल,
　　बर्तत केवल ब्रह्म सही है ।
है सब ही अध ऊरध केवल,
　　सुन्दर केवल ज्ञान वही ० ॥८॥
केवल ज्ञान भयौ जिनकै उर,
　　ते अध ऊरध लोक न जाही ।
व्यापक ब्रह्म अखड निरन्तर,
　　वा विन और कहू कछु नाही ॥
ज्यौ घट नाश भये घटव्यौम सु,
　　लीन भयौ पुनि है नभ माही ।
त्यौं मुनि मुक्ति जहा वपु छाडत,
　　सुन्दर मोक्ष शिला कहु काही ॥९॥

---

(९) वपु-शरीर । मोक्षशिला-जैन धर्म मे प्रसिद्ध उच्च अवस्था ।

आदि हु तौ नहिं अंतिहु है नहीं,
मधि शरीर भयौ भ्रम कूप।
भासत है कछु और की और ई,
ज्यौं रजु में अहि सीपि सु रूप ॥
देखि मरीचि उठ्यौ विचि त्रिभ्रम,
जांनत नाहिं उहै रवि धूपं।
सुन्दर ज्ञांन प्रकाश भयौ जब,
एक अखंडित ब्रह्म अनूप ॥१०॥

मनहर छन्द

जाही कै विवेक ज्ञान ताही कै कुशल भई,
जाही ओर जाइ वाकौं ताही ओर सुख है।
जैसैं कोऊ पाइनि पजार कौं चढाइ लेत,
ताकौ तो न काऊ काटे खोभरे कौ दुख है ॥
भावै कोऊ निन्दा करौ भावै तौ प्रशंसा करौ,
वौ तौ देखै आरसी में आपनौ ई मुख है।
देह कौ व्यौहार सब मिथ्या करि जांनै सोई,
सुन्दर कहत एक आतमा कौ रुख है ॥११॥

---

(१०) मरीचि-मृगतृष्णा । विचि-वीचि, जल की तरगें।

(११) पैजार-जूती। खोभरा-खड्डा। रुख-लक्ष्य।

अतहकरन जाकै तम गुन छाइ रह्यौ,
जडता अज्ञान वाकै आलस भै त्रास है।
रज गुन कौ प्रभाव अतहकरन जाकै,
बिबिध करम वाकै कामनां को वास है॥
सत्त्व गुन अतहकरन जाकै देखियत,
क्रिया करि सुध वाकै भक्ति कौ निवास है।
त्रिगुन अतीत साक्षी तुरीय स्वरूप जानि,
सुन्दर कहत वाकै ज्ञान को प्रकाश है॥१२।

तमोगुनो बुद्धि सु तौ तवा कै समान जैसे,
ताकै मध्य सूरज की रच हू न जोति है।
रजोगुनी बुद्धि जैसे आरसी को औधी ओर,
ताकै मध्य सूरज कौ कछुक उद्योत है॥
सतोगुनी बुद्धि जैसे आरसी की सूधी ओर,
ताकै मध्य प्रतिबिंब सूरज को पोत है।
त्रिगुन अतीत जैसे प्रतिबिंब मिटि जात,
सुन्दर कहत एक सूरज ई होत है॥१३॥

---

(१२) तुरीय-चतुर्थ अवस्था। भै भय।
(१३) उद्योत-प्रकाश। पोत-छाया।

सबसौं उदास होइ काढि मन भिन्न करै,
ताकौ नाम कहियत परम बैराग है।
अंतहकरन हूं की वासना निवृत्त होहि,
ताकौ मुनि कहत हैं उहै बडौ त्याग है॥
चित्त एक ईश्वर सौं नैकहू न न्यारौ होइ,
उहै भक्ति कहियत उहै प्रेम माग है।
आपु ब्रह्म जगत कौ एक करि जानै जब,
सुन्दर कहत वह ज्ञान भ्रम भाग है॥१४॥

भ्रम विध्वस

कोऊ नृप फूलनि की सेज पर सूतौ आइ,
जब लग जाग्यौ तौ लौं अति सुख मान्यौ है।
नींद जब आई तब वाही कौ सुपन भयौ,
जाइ पर्‌यौ नरक कै कुड मैं यौ जान्यौ है॥
अति दुख पावै पर निकस्यौ न क्यौं ही जाइ,
जागि जब पर्‌यौ तब सुपन बखान्यौ है।
इह झूठ वह झूठ जाग्रत सुपन दोऊ,
सुन्दर कहत ज्ञानी सब भ्रम भान्यौ है॥१५॥

---

(१४) माग-मार्ग। भ्रमभाग-भ्रान्ति रहित।

सुपनै मै राजा होइ सुपनै मैं रक होइ,
सुपनै मैं सुख दुख सति करि जानै है।
सुपनै मैं बुद्धिहीन मूढ समझै न कछु,
सुपनै मैं पडित बहु ग्रथनि बखानै है॥
सुपनै मैं कामी होइ इद्रनि कै बसि पर्यौ,
सुपनै मैं जती होइ अहकार आनै है।
सुपनै तें जाग्यौ जब समुझि परी है तब,
सुन्दर कहत सब मिथ्या करि मानै है॥१६॥

बिधि न निषेध कछु भेद न अभेद पुनि,
क्रिया सौ करत दीसै यौ ही नित प्रति है।
काहू कौ निकट राखै काहू कौ तौ दूरि भाखै,
काहू सौ नेरै न दूरि ऐसी जाकी मति है॥
राग ही न द्वेष कोऊ शोक न उछाह दोऊ,
ऐसी विधि रहै कहु रति न विरति है।
वाहिर व्यौहार ठानै मन मैं सुपन जानै,
सुन्दर ज्ञानी की कछु अदभुत गति है॥१७॥

---

(१६) जती-यति, साधु सन्यासी।

(१७) विधि-विधान, आज्ञा। उछाह-उत्साह, उमग, खुशी। रति-आसक्ति। विरति-वैराग्य, अरुचि।

कामी है न जती है न सूम है न सती है न,
- राजा है न रंक है न तन है न मन है।
सौवै है न जागै है न पीछै है न आगै है न,
ग्रहै है न त्यागै है न घर है न वन है॥
थिर है न डोलै है न मौन है न बोलै है न,
बंधै है न खोलै है न स्वामी है न जन है।
वैसौ कोऊ होइ जब वाकी गति जानै तब,
सुन्दर कहत ज्ञानी शुद्ध ज्ञान-घन है॥१८॥

सुनत श्रवन मुख बोलत बचन घ्रान,
सू घत फूलनि रूप देखत दृगन है।
त्वक् सपर्शन रस रसना ग्रसन कर,
ग्रहत असन अरु चलत पगन है॥
करत गवन पुनि बैठत भवन सेज,
सोवत रवन तन ओढत नगन है।
जु जु कछु बिवहार जानत सकल भ्रम,
सुन्दर कहत ज्ञानी गगन-मगन है॥१९॥

---

(१९) असन-भोजन। गगनमगन-आकाशवत् शुद्ध व्यापक ब्रह्म स्वरूप।

कर्म न विकर्म करै भाव न अभाव धरै,
शुभ हु अशुभ परै यातै निधरक है।
बसती न शून्य जाकै पाप ही न पुन्य ताकै,
अधिक न न्यून वाकै स्वर्ग न नरक है॥
सुख दुख सम दोऊ नीच ही न ऊच कोऊ,
ऐसी बिधि रहै सोऊ मिल्यौ न फरक है।
एक ही न दोइ जानै बध मोक्ष भ्रम मानै,
सुन्दर कहत ज्ञानी ज्ञान मै गरक है॥२०॥

अज्ञानी कौ दुख कौ समूह जग जानियत,
ज्ञानी कौ जगत सब आनन्द स्वरूप है।
नैन हीन कौ तौ घर वाहिर न सूझै कछु,
जहा जहा जाइ तहा तहा अधकूप है॥
जाकै चक्षु है प्रकाश अधकार भयौ नाश,
वाकौ जहा रहै तहा सूरज की धूप है।
सुन्दर अज्ञॉनी ज्ञानी अतरि वहुत आहि,
वाकै सदा राति वाकै दिवस अनूप है॥२१॥

---

(२०) निधरक-वेधड़क, निर्भय। गरक-मग्न, डूबा हुआ।

ज्ञानी अरु अज्ञानी की क्रिया सब एकसी ही,
अज्ञ आशा और ज्ञानी आश न निराश है।
अज्ञ जोई जोई करै अहंकार बुद्धि धरै,
ज्ञानी अहंकार बिनु करत उदास है ॥
अज्ञ सुख दुख दोऊ आपु विषै मानि लेत,
ज्ञानी सुख दुख कौ न जानै मेरे पास है।
अज्ञ की जगत यह सकल संताप करै,
सुन्दर ज्ञानी कै सब ब्रह्म कौ बिलास है ॥२२॥

ज्ञानी लोक संग्रह कौ करत व्यौहार बिधि,
अंतहकरन मैं सुपन की सी दौर है।
देत उपदेश नाना भांति के बचन कहि,
सब कोऊ जानत सकल शिरमौर है ॥
हलन चलन पुनि देह सौ करत नित,
ज्ञान मैं गरक नित हिये निज ठौर है।
सुन्दर कहत जैसे दन्त गजराज मुख,
खाइबे के और ही दिखाइबे कै और है ॥२३॥

---

(२३) लोक-संग्रह-लोक-शिक्षा ।

इद्रिनि कौ ज्ञान जाकै सु तौ पशु कै समान,
देह अभिमान खान पान ही सौं लीन है।
अतहकरन ज्ञान कछुक बिचार जाकै,
मनुष व्यौहार शुभ कर्मनि अधीन है ॥
आतमा बिचार ज्ञान जाकै निशवासरि है,
सोई साधु सकल ही बात मैं प्रबीन है।
एक परमातमा कौ ज्ञान अनुभव जाकै,
सुन्दर कहत वह ज्ञानी भ्रम छीन है । २४॥

जाही ठौर रवि कौ उद्योत भयौ ताही ठौर,
अधकार भागि गयौ गृह बनवास तै।
न तौ कछु बन तै उलटि आवै घर माहि,
न तौ बन चलि जाइ कनक आवास तै ॥
जैसै पखी पाख टूटि जाही ठौर पर्यौ आइ,
ताही ठौर गिरि रह्यौ उडिबे की आश तै।
सुन्दर कहत मिटि जाइ सब दौर धूप,
धोखौ न रहत कोऊ ज्ञान के प्रकाश तै ।२५॥

---

(२४) निशवासर-रातदिन ।

(२५) कनक-सुवर्ण । आवास-महल ।

जैसैं काहू देश जाइ भाषा कहै और सी ही,
समुझ न कोऊ वासौ कहै का कहतु है।
कोऊ दिन रहि करि वोली सीखैं उनही की,
फेरि समुझावैं तब सबकौ लहतु है॥
तैसे ज्ञान कहैं तैं सुनत बिपरीत लागैं,
आप आपुनौ ही मत सबकौ गहतु है।
उनही के मत करि सुन्दर कहत ज्ञान,
तबही तौ ज्ञान ठहराइ कै रहतु है॥२६॥

एक ज्ञानी कर्मनि मैं ततपर देखियत,
भक्ति कौ प्रभाव नाहिं ज्ञान मैं गरक है।
एक ज्ञानी भकति कौ अत्यन्त प्रभाव लिये,
ज्ञान माहि निश्चै कर कर्म सौ तरक है॥
एक ज्ञानी ज्ञानही मैं ज्ञानकौ उचार करै,
भक्ति अरु कर्म इनि दुहु तै फरक है।
कर्म भक्ति ज्ञान तीनौ वेद मै बखान कहे,
सुन्दर बतायौ गुरु ताहि मैं लरक है॥२७॥

---

(२७) भकति-भक्ति। तरक-तर्क। लरक-तत्पर, लगा हुआ।

जसै पखी पगनि सौ चलत अवनि आइ,
तैसै ज्ञानी देह करि कर्मनि करतु है।
जैम पखी चचु करि चुगत अहार पुनि,
तैसै ज्ञानी उर मैं उपासना धरतु है ।।
जैसै पखी पखनि सौ उडत गगन माहि,
तैसै ज्ञानी ज्ञान करि ब्रह्म मैं चरतु है ।
सुन्दर कहत ज्ञानी तीनौ भाति देखियत,
ऐसी विधि जानै सव सशय हरतु है ।।२८।।

इन्दव छन्द

एक क्रिया करि किर्षि निपावत
आदि रु अत ममत्त्व वध्यौ है ।
एक क्रिया करि पाक करै जव,
भोजन लौ कछु अन्न रध्यौ है ।।
एक क्रिया मल त्यागत है,
लघुनीति करै कहु नाहि फध्यौ है ।
त्यौ यह ज्ञानि क्रिया अरु सग्रह,
सुन्दर तीनि प्रकार सध्यौ है ।। २९।।

(२८) अवनि-पृथ्वी, जमीन । अहार-आहार, भोजन । उर-हृदय, मन ।

(२९) किर्षि कृषि, खेती । निपावत-उपजाता है ।

दोइ जने मिलि चौपरि खेलत,
सारि धरै पुनि डारत पासा।
जीतत है सु खुशी मन मैं अति,
हारत है सु भरै जु उशासा ॥
एक जनौ दुहु ओर हो खेलत,
हारि न जीति करै जु तमासा।
तैसे अज्ञानी कै द्वैत भयौ भ्रम,
सुन्दर ज्ञानी कै एक प्रकासा ॥३०॥

॥ सवईया छंद ॥

जीव नरेश अविद्या निद्रा,
सुख शय्या सोयौ करि हेत।
कर्म खवास पुटपरी लाई,
तातै बहु बिधि भयौ अचेत ॥
भक्ति प्रधान जगायौ कर गहि,
आलस भर्यौ झभाई लेत।
सुन्दर अब निद्रा बस नाही,
ज्ञान जागरन सदा सुचेत ॥३१॥

---

(३१) पुटपरी-नशीली चीजो की पुट दी हुई शराब। या पगचची।

ज्ञानी कर्म करैं नाना विधि,
　　अहंकार या तन कौ खोवैं।
कर्मन कौ फल कछू न वछै,
　　अतहकरन वासना धोवैं ॥
ज्यौं कोऊ खेतनि कौं जोतत,
　　लै करि वीज भूनि करि वोवैं।
सुन्दर कहै सुनौ दृष्टान्त हि,
　　नागौ न्हाइ सु कहा निचोवै ॥१२॥

॥ इति ज्ञांनी को अंग सम्पूर्ण ॥

ान ज्ञान को अंग

३१॥

द दूर

ाठ नागत,
 नहि कुनागी ।
 ि दीनन,
 ो नव नारी ।
 नयन्नरि,
 मनमागी ।
 ी यर,
 ी न्यारी ॥१॥
 ारि,
 ावारी ।
 व,
 पागी ॥

ी ।

री ॥२॥

हृदय में ।

इन्दव छन्द

कै यह देह धरौ वन पर्वत,
 कै यह देह नदी मैं वहौ जू ।
कै यह देह धरौ धरती मँहि,
 कै यह देह कृसान दहौं जू ॥
कै यह देह निरादर निंदहु,
 कै यह देह सराहि कहौ जू ।
सुन्दर सशय दूरि भयौ सव,
 कै यह देह चलौ कि रहौ जू ॥ ॥
कै यह देह सदा सदा सुख सम्पति,
 कै यह देह विपत्ति परौ जू ।
कै यह देह निरोग रहौ नित,
 कै यह देह हि रोग चरौ जू ॥
कै यह देह हुताशन पैठहु,
 कै यह देह हिमारै गरौ जू ।
सुन्दर सशय दूरि भयौ सव,
 कै यह देह जिवौ कि मरौ जू ॥४॥

॥ इति नि सशय ज्ञाँन को अङ्ग सम्पूर्ण ॥

---

(३) कृसान-कृशानु, अग्नि । (४) हुताशन-अग्नि । हिमारै-हिमालय ।

अथ प्रेमपरायण ज्ञान कौ अंग

॥३१॥

इन्दव छंद

प्रीति की रीति नहीं कछु राखत,
जाति न पाति नहीं कुलगारो ।
प्रेम कै नेम कहू नहिं दीसत,
लाज न कान लग्यौ सब खारो ।
लीन भयौ हरि सौं अभिअन्तरि,
आठहु जाम रहै मतवारो ।
सुन्दर कोऊ न जानि सकै यह,
गोकुल गाव कौ पैंडो ही न्यारो ॥१॥
ज्ञान दियौ गुरुदेव कृपा करि,
दूरि कियौ भ्रम खोलि किवारो ।
और क्रिया कहि कोन करै अब,
चित लग्यौ परब्रह्म पियारो ॥
पाव विना चलिकै तिहि ठाहर,
पगु भयौ मन मीत हमारो ।
सुन्दर कोउ न जानि सकै यह,
गोकुल गाव कौ पैंडो ही न्यारो ॥२॥

---

(१) कुलगारो-कुलगोत्र । अभिअन्तर-भीतर हृदय मे पैंडो-मार्ग ।

एक अखण्डित ज्यौं नभ व्यापक,
बाहिर भीतरि है इकसारौ ।
दृष्टि न मुष्टि न रूप न रेख न,
शेत न पीत न रक्त न कारौ ।
चक्रित होइ रहै अनुभै विन,
जौ लगि नाहि न ज्ञान उजारौ ।
सुन्दर कोउ न जानि सकै यह,
गौकुल गावकौ पैंडौ ही न्यारौ ।।३।।

द्वंद्व विना बिचरै बसुधा पर,
जा घट आतम ज्ञान अपारौ ।
काम न क्रोध न लोभ न मोह न,
राग न द्वेष न म्हारौ न थारौ ।।
जोग न भोग न त्याग न सग्रह,
देह दशा न ढक्यौ न उघारौ ।
सुन्दर कोउ न जानि सकै यह,
गौकुल गावकौ पैंडौ ही न्यारौ ।४।।

---

(३) चक्रित-चकित । नभ-आकाश । (४) द्वन्द्व-शीत-उष्ण, भूख-प्यास सुख-दुख, मान-अपमान, जय-पराजय आदि । वसुधा-पृथ्वी ।

लक्ष अलक्ष न दक्ष अदक्ष न,
पक्ष अपक्ष न तूल न भारी ।
मूक न वाच अवाच न वाच न,
कंचन काच न दीन उदारी ॥
ज्ञान अज्ञान न मान अमान न,
ध्यान गुमान न जीत न हारी ।
सुन्दर कोउ न जानि सकै यह,
गोकुल गांव को पैंडो ही न्यारो ॥५॥

॥ इति प्रेमपरायण ज्ञान को अंग सम्पूर्ण ॥

(५) लक्ष-लक्ष्य । अलक्ष-अलक्ष्य । दक्ष-निपुण, चतुर, कुशल । तूल-हल्का । अवाच-अवाच्य, अवर्णनीय । वाच-वाच्य, वर्णनीय । दीन-गरीब । उदार-दानी ।

अथ अद्वैत ज्ञांन को अंग ।।३२।।

इन्दव छंद (प्रश्नोत्तर)

हौ तुम कौन ? हू ब्रह्म अखंडित,
देह में क्यो ? नहिं देह कै नेरै ।
बोलत कैसै कै ? हूं नहि बोलत,
जानिये कैसै ? अज्ञान है तेरै ।।
दूरि करौ भ्रम ? निश्चै धारि,
कहौ गुरुदेव ? कहौ नित टेरै ।
हू तुम ऐसै,हि तू पुनि ऐसौ ई,
दोइ भये ? नहिं द्वैत है मेरै ।।१।।

हू कछु और कि तू कछु और कि,
है कछु और कि सो कछु औरै ।
हू अरु तू यह है कछू सौ पुनि,
बुद्धि विलास भयौ झक झौरै ।।
हू नहि तू नहिं है कछु सौ नहि,
बूझि विना जित ही तित दौरै ।
हू पुनि तू पुनि है कछु सो पुनि,
सुन्दर व्यापि रह्यौ सब ठौरै ।।२।।

उत्तम मद्धिम और शुभाशुभ,
भेद अभेद जहा लग जो है ।

दीसत भिन्न तवो अरु दर्पन,
वस्तु विचारत एकहि सो है ॥
जो सुनिये सब दृष्टि परै पुनि,
ता बिन और कहौ अब को है ।
सुन्दर सुन्दर व्यापि रह्यो सब,
सुन्दर ही महिं सुन्दर सो है ॥३।

ज्यों बन एक अनेक भये द्रुम,
नाम अनंतनि जाति हु न्यारी ।
बापि तडाग रु कूप नदी सब,
है जल एक सो देखि निहारी ॥
पावक एक प्रकास बहू विधि,
दीप चिराक मसाल हु बारी ।
सुन्दर ब्रह्म विलास अखडित,
खडित भेद की बुद्धि सु टारी ॥४॥

एक शरीर में अग भये बहु,
एक धरा पर धाम अनेका ।
एक शिला महिं कोरि किये सब,
चित्र वनाइ धरे ठिकठेका ॥
एक समुद्र तरग अनेकनि,
कैसे के कीजिये भिन्न विवेका ।
द्वैत कछू नहिं देखिये सुन्दर,
ब्रह्म अखंडित एक की एका ॥५॥

ज्यौ मृतिका घट नीर तरग हि,
वादल व्यौम सु व्यौम जु भूता ।।
वृक्ष सु वीज है वीज सु वृक्ष है,
पूत सु वाप है वाप सु पूता ।
वस्तु विचारत एक हि सुन्दर,
ताने रू वानै तौ देखिये सूता ।।६।।

भूमि हु चेतनि आपु हु चेतनि,
तेज हु चेतनि है जु प्रचडा ।
वायु हु चेतनि व्यौम हु चेतनि,
शब्द हु चेतनि पिड ब्रह्ममण्डा ।।
है मन चेतनि बुद्धि हु चेतनि,
चित्त हु चेतनि आहि उडडा ।
जो कछु नाम धरै सौई चेतनि,
चेतनि सुन्दर ब्रह्म अखडा ।।७।।

एक अखडित ब्रह्म बिराजत,
नाम जुदौ करि विश्व कहावै ।
एक ई ग्रथ पुरान बखानत,
एक ई दत्त बसिष्ठ सुनावै ।।
एक ई अर्जुन उद्धव सौ कहि,
कृष्ण कृपा करिकै समुझावै ।
सुन्दर द्वैत कछू मति जानहु,
एक ई ब्यापक बेद बतावै ।।८।।

मनहर छंद

सिष्य पूछै गुरुदेव ! गुरु कहैं पूछ सिष्य,
मेरै एक सशय है ? पूछै क्यौं न अब ही ।
तुम कह्यौ एक ब्रह्म, अबहू मैं कहू एक,
एक तौ अनेक क्यौ ? इहै तौ भ्रम सब ही ॥
भ्रम इहै कौंन कौ है ? भ्रम ही कौ भ्रम भयौ,
भ्रम ही कौं भ्रम कैसै ? तू न जानैं कब ही ।
कैसैं करि जा ौ प्रभु ? गुरु कहै निश्चै धरि,
निहचै मै धार्यौ अब एक ब्रह्म तब ही ॥६॥
ब्रह्म ठौर कौ है ठौर दूसरौ न कोऊ और,
बस्तु कौ बिचार कियै बस्तु पहिचानियै ।
पच तत्त तीनि गुन बिस्तरे बिबिध भाति,
नाम रूप जहा लगै मिथ्या माया मानियै ॥
सेषनाग आदि दै कै बैकुण्ठ गोलोक पुनि,
वचन बिलास सब भेद भ्रम भानियै ।
न तो कोऊ उरझ्यौ न सुरझ्यौ कहौ सु कौन,
सुन्दर सकल यह ऊबाबाई जानियै ॥१०॥

(१०) ऊबावाई-भूल भुलैया ।

प्रथम हि देह मै तै वाहिर की चौकि पर्यौ,
　　इन्द्रिय व्यौपार सुख सत्य करि जान्यौ है ।
कौन ऊ सजोग पाइ सद्‌गुरु सौ भेट भई,
　　उन उपदेश दे कै भीतर कौं आँन्यौ है ॥
भीतर कै आवत ही बुद्धि कौ प्रकास भयौ,
　　कौन देह ? कौन मैं ? जगत किन मान्यौ है ?
सुन्दर विचारत यौ ऊपज्यौ अद्वैत ज्ञान,
　　आप कौ अखड ब्रह्म एक पहिचान्यौ है ॥११॥

हसल छंद

सकल ससार बिस्तार करि बरनियौ,
　　स्वर्ग पाताल मृति पूरि भ्रम रह्यौ है ।
एक तै गिनत गिनि जाइये सौ लगै,
　　फेरि करि एक कौ एक ही गह्यौ है ॥
यह नहि यह नहि यह नहिं यह नहिं,
　　रहै अवशेष सौ बेद हू कह्यौ है ।
सुन्दर सही यौ बिचार आपुनपौ,
　　आपुमै आपुकौ आपु ही लह्यौ है ॥१२॥

एक तू दोइ तू तीनि तू चारि तू
　　पच तू तत्व मैं जगत कीयौ ।
नाम अरु रूप व्है बहुत बिधि बिस्तर्यौ,
　　तुम बिना और कोऊ नाहि बीयौ ॥

राव तू रक तू दाना तू दीन तू,
दोइ करि मेलि तै दीयौ लियौ ।
सकल यह सृष्टि तुम माहि ऊपजै खपै,
कहत सुन्दर बडौ बिपुल हीयौ ।।१३।

मनहर छंद

तोही मैं जगत यह तूं ही है जगत माहि,
तो मैं अरु जगत मै भिन्नता कहा रही ।
भूमि ही तै भाजन अनेक भाति नाम रूप,
भाजन बिचारि देखै ऊहै एक है मही ।।
जल तै तरग भई फेन बुद्बुदा अनेक,
सोऊ तौ बिचारै एक वह जल है सही ।
महापुरुष जेते है सबकौ सिधांत एक,
सुन्दर 'खल्विद ब्रह्म' अन्त बेद है कही ।।१४।।
जैसै इक्षु रस की मिठाई भाति भाति भई,
फेरि करि गारै इक्षु रस ही लहतु है ।
जैसै घृत थीजि कै डरा सौ बधि जात पुनि,
फेरि पिघरे तै वह घृत ही रहतु है ।

(१३) बीयो-अन्य, द्वितीय, दूसरा । दाना-धनी, दानी । विपुल-विशाल । हीयो-हृदय ।

जैसें पानी जमिकै पाखान हू सौ देखियत,
सो पखान फेरि करि पानी व्है बहुत है ।
तैसै हि सुन्दर यह जगत है ब्रह्ममय,
ब्रह्म सो जगत मय बेद यौ कहतु है ॥१५॥

जैसें काठ कौरि करि पूतरि बनाइ राखी,
जो बिचार देखिये तौ उहै एक दारु है ।
जैसे माला सूत ही की मनिकाऊ सूत ही के,
भीतरि हू पोयौ पुनि सूत ही कौ तार है ॥
जैसे एक समुद्र के जल ही कौ लौंन भयौ,
सोऊ तौ बिचारे पुनि उहै जल खार है ।
तैसे हि सुन्दर यह जगत सु ब्रह्ममय,
ब्रह्म सु जगत मय याहि निरधार है ॥१६॥

जैसे एक लोहके हथ्यार नाना बिधि कीये,
आदि अन्ति मधि एक लोह ई प्रवानिये ।
जैसे एक कचन के भूषन अनेक भये,
आदि अत मधि एक कचन ई जाँनिये ॥

(१५) इक्षु-ईख । थीजिकै-जमकर । पखाण-पाषाण, पत्थर ।

(१६) दारु-लकडी । लौन-लवण, नमक । निरधार-निश्चय ।

जैसे एक मैन के सवारे नर हाथी हय,
आदि अन्ति मधि एक मैंन ई बखानिये ।
तैसे ही सुन्दर यह जगत सु ब्रह्ममय,
ब्रह्म सु जगत मय निश्चै करि मानिये ।।१७।।

ब्रह्म मैं जगत यह ऐसी विधि देखियत,
जैसी विधि देखियत फूलरी महीर मैं ।
जैसी विधि गिलम दुलीचे मैं अनेक भाति,
जैसी बिधि देखियत चूनरी ऊ चोर मैं ।।
जसी विधि कागरे ऊ कोट परि देखियत,
जैसी विधि देखियत वुदवुदा नीर मै ।
सुन्दर कहत लीक हाथ पर देखियत,
जैसी विधि देखियत शीतलता शरीर मैं ।।१८।।

ब्रह्म अरु माया जैसे शिव अरु शक्ति पुनि,
पुरुष प्रकृति दोऊ कहिके सुनाये है ।
पति अरु पतनी ईश्वर अरु ईश्वरी ऊ,
नारायन लक्षमी ह्वै बचन कहाये हैं ।
जैसे कोऊ अर्धनारी नाटेश्वर रूप धरै,
एक बीज ही ते दोइ दाल नाम पाये हैं ।
तैसे ही सुन्दर बस्तु ज्यौं है त्यौं ही एक रस,
उभय प्रकार होई आपु ही दिखाये हैं ।।१९।।

---

(१७) मैन-मोम । ब्रह्ममय-ब्रह्मस्वरूप ।

कारज देखि भयौ विचि विभ्रम,
कारन देखि विभ्रम्म विलावै ।
सुंदर या निहचै अभिअंतरि,
द्वैत गये फिरि द्वैत न आवै ॥२२॥

मनहर छंद

द्वैत करि देखै जब द्वैत ही दिखाई देत,
एक करि देखै तब उहै एक अंग है ।
सूरज कौ देखै जब सूरज प्रकासि रह्यौ,
किरन कौ देखै तौ किरन नाना रंग है ॥
भ्रम जब भयौ तब माया ऐसौ नाम धर्‌यौ,
भ्रम कै गये तै एक ब्रह्म सरबंग है ।
सुंदर कहत याकी दृष्टि ही कौ फेर भयौ,
ब्रह्म अरु माया कै तौ माथै नही शृङ्ग है ।२३॥
श्रोत्र कछु और नाहि नेत्र कछु और नाहि,
नासा कछु और नाहिं रसना न और है ।
त्वक कछु और नाहि वाक कछु और नाहि,
हाथ कछु और नाहि पावन की दौर है ॥

---

(२३) सरबंग-सर्वव्यापक ।

मन कछु और नाहि बुद्धि कछु और नाहि,
चित्त कछु और नाहि अहकार तौर है।
सु दर कहत एक ब्रह्म विनु और नाहि,
आपु ही मैं आपु व्यापि रह्यौ सब ठौर है ॥२८॥

॥ इति अद्वैत ज्ञान को अग सम्पूर्ण ॥

अथ जगत मिथ्यात्व को अंग ॥३३॥

मनहर छंद

कियो न विचार कछु भनक परी है कान,
  वार आई मुनि कै डरपि विष खायो है।
जैसे कोऊ अनछतो ऐसै ही बुलाइयत,
  वार बीति गई पर कोऊ नही आयो है॥
वेद हु वरनि कै जगत तरु ठाडो कियौ,
  अन्त पुनि वेद जर मूल तें उठायो है।
तैसे हि सुन्दर याको कोऊ एक पावै भेद,
  जगत को नाम मुनि जगत भुलायो है॥१॥
ऐसौ ही अज्ञान कोऊ आइके प्रगट भयौ
  दिव्य दृष्टि दूर गई देखै चाम दृष्टि कौ।
जैसे एक आरसी सदा ई हाथ माहि रहै,
  सामैं हों न देखे फेरि फेरि देखै पृष्ठि कौ॥
जैसे एक व्योम पुनि वादर सौ छाइ रह्यौ,
  व्योम नहि देखत देखत वहु वृष्टि कौ।
तैसे एक ब्रह्म ई विराजमान सुन्दर है,
  ब्रह्म कौ न देखै कोऊ देखै सव सृष्टि कौ॥२॥

---

(१) अनछतो-अनुपस्थित, असत्, सत्तारहित।

(२) सामैं-सीधी तरफ। पृष्ठि-पीछे की तरफ।

अनछतौ जगत अज्ञान तैं प्रगट भयौ,
जैसैं कोऊ बालक बेताल देखि डर्‌यौ है।
जैसैं कोऊ सुपनैं मैं दाव्यौ है अथारैं आइ,
मुख तें न आवै बोल अैसो दुख पर्‌यौ है।।
जैसैं अंधियारी रैनि जेवरी न जानै ताहि,
आपु ही तैं साप मानि भय अति कर्‌यौ है।
तैसैं ही सुन्दर एक ज्ञान कै प्रकास बिन,
आपु दुख पाइ पाइ आपु पचि मर्‌यौ है।।३।।

मृत्तिका समाइ रही भाजन कै रूप माहि,
मृत्तिका कौ नाम मिटि भाजन ई गह्यौ है।
कनक समाय त्यौं ही होइ रह्यौ आभूषन,
कनक न कहै कौऊ आभूषन कह्यौ है।।
बीज ऊ समाइ करि बृक्ष होई रह्यौ पुनि,
बृक्ष ई कौ देखियत बीज नहीं लह्यौ है।
सुन्दर कहत यह यौंही करि जानौ सब,
ब्रह्म ई जगत होइ ब्रह्म पूरि रह्यौ है।।४।।

---

(३) अनछतो-अस्तित्वहीन। अथारैं-छाती पर।

(४) मृत्तिका-मिट्टी। भाजन-बर्तन। कनक-सुवर्ण, सोना।

कहत है देह माहि जीव आइ मिलि रह्यौ.
  कहां देह कहा जीव वृथा चौंक पर्यो है।
बूडवे कै डरतें तिरन को उपाय करें,
  ऐसें नहिं जांनै यह मृगजरा भर्यो है।
जेवरी कौं साप जैंसे सीपि विषे रूपो जानि,
  और कौ और ई देखि यौं ही भ्रम कर्यो है।
सुन्दर कहत यह एक ई अखड ब्रह्म,
  ताहि को पलटि कें जगत नाम धर्यो है ॥५॥

॥ इति जगतमिथ्यात्व को अंग सम्पूर्ण ॥

अथ आश्चर्य को अङ्ग ॥३४॥

मनहर छन्द

बेद कौ बिचार सौई सुनि कै सतनि मुख,
　　आपु हू विचार करि सोई धारियतु है।
योग की युगति जानि जग तें उदास होइ,
　　सुनि मैं समाधि लाइ मन मारियतु है॥
ऐसें ऐसें करत करत केते दिन बीते,
　　सुन्दर कहत अज हू बिचारियतु है।
कारौ ही न पीरौ न तौ तातौ ही न सीरौ कछु,
　　हाथ न परत तातें हाथ झारियतु है॥१॥
मन कौ अगम अति बचन थकित होत,
　　बुद्धि हू बिचार करि बहु खीडियतु है।
श्रवन न सुनै जाहि नेन हू न देखै ताहि,
　　रसना कौ रस सरबस छीडियतु है॥
त्वक कौ सपर्स नाहि घ्रान कौ न बिषै होइ,
　　पगनि हू करि जित तित हीडियतु है।
सुन्दर कहत अति सूक्षिम स्वरूप कछु,
　　हाथ न परत तातें हाथ मीडियतु है॥२॥

---

(१) कारो-काला। पीरो-पीला। तातो-गर्म। सीरो-ठढा। (२) खीडियतु है-बिखर जाता है। छीडियतु है-छिटक जाता है। हीडियतु है-भटकता है। मीडियतु है-मलता है।

गुफा की मवारि तह आसन ऊ मारि करि,
  प्रान हू की धारि धारि नाक सीटियतु है।
इंद्रिनि की घेर करि मन हू को फेरि करि,
  त्रिकुटि मैं हेरि हेरि हियो छीटियतु है॥
सव छिटकाइ पुनि मुंनि भ समाइ तह,
  समाधि लगाइ करि आखि मीटियतु है।
सुन्दर कहत हम और ऊ किये उपाइ,
  हाथ न परत तातै हाथ पीटियतु है॥३॥

बोलै ही न मौन धरै बैठै ही न गौन करै,
  जागै ही न सोवे सु तौ दूरि हो न नेरी है।
आवै ही न जाइ, न तौ थिर अकुलाइ पुनि,
  भूखौ ही न खाइ कछु तातो ही न सीरौ है॥
लेत ही न देत कछु हेत न कुहेत पुनि,
  श्याम हो न श्वेत सु तौ रातौ ही न पीरौ है।
दूवरौ न मोटौ कछु लावौ हू न छोटौ तातै,
  सुन्दर कहै सु कहा काच ही न हीरौ है॥४॥

भूमि ही न आप न तौ तेज ही न ताप न तौ,
  वायु हू न व्यौम न तौ पच कौ पसारौ है।
हाथ ही न पाव न तौ नैन बैन भाव न तौ
  रक ही न राव न तौ बृद्ध ही न बारौ है॥

(४) गौन-गमन। नेरो-नजीक। अकुलाई-चलायमान।

पिंड ही न प्रान न तौ जान न अजान न तौ,
बंध निरबान न तौ हरवौ न भारौ है।
द्वैत न अद्वैत न तो भीत न अभीत तातैं,
सुन्दर कह्यौ न जाइ मिल्यौ ही न न्यारौ है।।५।

इन्दव छन्द

पाप न पुंनि न थूल न शुंनि न,
बौल न मौन न सोवैं न जागैं।
एक न दोइ पुरुष्ष न जोइ,
कहै कहा कोइ न पीछैं न आगैं।।
बृद्ध न बाल न कर्म न काल न,
ह्रस्व बिशाल न जूझै न भागै।
बंध न मोक्ष, अप्रोक्ष न प्रोक्ष,
न सुंदर है न असुंदर लागै।।६।।
तत्व अतत्त्व कह्यौ नहिं जात जु,
शुंनि अशुंनि उरै न परै है।
जोति अजोति न जान सकै कोउ,
आदि न अंति जिवै न मरै है।।
रूप अरूप कछू नहिं दीसत,
भेद अभेद करै न हरै है।
शुद्ध अशुद्ध कहै पुनि कौन जु,
सुंदर बोलै न मौन धरै है।।७।।

(६) प्रोक्ष-अप्रोक्ष-परोक्ष, अपरोक्ष।

खोजत खोजत खोजि रहे अरु,
    खोजत हैं पुनि खोजि हैं आनैं।
गावत गावत गाइ गये बहु,
    गावत हैं अरु गाइ हैं गानैं॥
देखत देखत देखि थके सब,
    दीसै नही कहुं ठौर ठिकानैं।
बूझत बूझत बूझि कैं सुदर,
    हेरत हेरत हेरि हिरानैं ॥८॥
पिंड मैं है परि पिंड लिपै नहि,
    पिंड परैं पुनि त्यां हि रहावै।
श्रोत्र मैं है परि श्रोत्र सुनै नहि,
    दृष्टि मैं है परि दृष्टि न आवै॥
बुद्धि मैं है परि बुद्धि न जानत,
    चित्त मैं है परि चित्त न पावै।
शब्द मैं है परि शब्द थक्यौ कहि,
    शब्द हू सुदर दूरि बतावै ॥९॥
भूमि हु तैसै हि आपु हु तैसै हि,
    तेज हु तैसै हि तैसै हि पौनऽ।
व्यौमहु तैसै हि आहि अखडित,
    तैसै हि ब्रह्म रह्यौ भरि भौनऽ॥
देह सजौग विजौग भयौ जब,
    आयौ सु कौन गयौ कहि कौनऽ।

जो कहिये तौ कहै न वनै कछु,
　　सुंदर जांनि गही मुख मौना ॥१०॥

एक ही ब्रह्म रह्यौ भरपूर तौ,
　　दूसरौ कौंन बतावनहारौ ।
जो कोउ जीव करै जु प्रमान,
　　तौ जीव कहा कछु ब्रह्म तैं न्यारौ ॥
जो कहै जीव भयौ जगदीश तैं,
　　तौ रवि माहि कहा कौ अधारौ ।
सुंदर मौन गही यह जांनि कैं,
　　कौंन हु भांति न ह्वै निरवारौ ॥११॥

जो हम खोज करैं अभिअंतरि,
　　तौ वह खोज उरै हि बिलावै ।
जो हम बाहिर कौ उठि दौरत,
　　तौ कुछु बाहिर हाथि न आवै ॥
जो हम काहु कौ पूजत है पुनि,
　　सोउ अगाध अगाध बतावै ।
ताहि तैं कोउन जानि सकै तिहि,
　　सुंदर कौनसी ठौर रहावै ॥१२॥

नैन न बैन न सैन न आस न,
　　वास न श्वास न प्यास न यातैं ।

शीत न ग्राम न ठौर न ठाम न,
पुत्र न वाम न वाप न माते ।।
रूप न रेख न भेख अभेख न,
श्वेत न पीत न श्याम न ताते ।
सुंदर मौंन गही सिध साधक,
कौन कहै उसको मुख वाते ।।१३।।

वेद थके कहि तंत्र थके कहि,
ग्रंथ थके निशवासरि गातें ।
शेख थके शिव इंद्र थके पुनि,
खोजि कियौ वहु भाति विधाते ।।
पीर थके अरु मीर थके पुनि,
धीर थके वहु वोल गिराते ।
सुंदर मौंन गही सिध साधक,
कौन कहै उसकी मुख वाते ।।१४।।
योगि थके कहि जैन थके,
रिषि तापस थाकि रहै फल खाते
न्यासि थके वनवासि थके जु,
उदासि थके वहु फेर फिराते ।।

सेख मसाइक और हु लाइक,
　　थाकि रहै मन मैं मुसकातै ।
सुदर मौन गही सिध साधक,
　　कौन कहै उसकी मुख बातै ॥१५॥

॥ इति आश्चर्य को अग सम्पूर्ण ॥

॥ इति सुन्दरविलास-सवैयाग्रन्थ सम्पूर्ण ॥
॥ हरि॰ ॐ तत् सत् ॥

परिशिष्ट

भावार्थ टिप्पणी

विपर्यय का अङ्ग

(१) श्रवणहु देखि-शास्त्र द्वारा देखना या श्रवण करना यथा–'आत्मा का अरे द्रष्टव्यः श्रोतव्यो निदिध्यासितव्य ।' सुनै पुनि नैनहु –अन्तर्दृष्टि से समझना या मनन । जिन्हा सू घि-वाणीपर ओम्,राम या ररकार रटन ध्वनि का आनद लेना । नासिका बोल-श्वास प्रश्वास के साथ 'सोऽहम्' भाव का अनुसधान करना । गुदा खाई-मूलाधारचक्र से योगाभ्यास प्रारभ करना । इन्द्रिय जल पीवे-इन्द्रियो का प्रत्याहार करना । विनही हाथ सुमेरुहि तोल-ममता छोडकर अहकार को उतार फैंकना । ऊचे पाइ-उच्चतम परमपद ब्रह्म को पाना, अह ब्रह्मास्मि ऐसी ऊची दृष्टि रखना, अपने जीवन का लक्ष्य ऊचा बनाये रखना, उच्च विचार रखना । मूण्ड नीचे कूं-अहभाव को तोडना या ईश्वर गुरु सन्तो को नमस्कार करना । तीनलोक मे विचरत डोल-तीनो अवस्थाओ का साक्षी बन कर रहना ।

(२) अधा तीन लोक को देखे–ससार से आख मूदकर आत्मदृष्टि से या ब्रह्मदृष्टि से सबको देखना । यथा–यो मा पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति । बहरा सुने बहुत विधि बाद–कर्णविरोध

करके आन्तरिक ध्वनियों को सुनना या अनासक्त उदासीन भाव से सब सुनना या सद् व्यवहार करना। नकटा वास कमल की लेवे-लोकलज्जा छोड कर भगवत् प्रेम का आनन्द लेना। गूंगा करे बहुत सवाद-सासारिक चर्चाओं मे मौन रहकर ब्रह्मचर्चा मे लीन रहना। टूटा पकरि उठावे पर्वत-सब व्यवहार करता हुआ भी निष्क्रिय होना, कर्तृत्वाभिमान से दूर रहना। पगुल करे नृत्य आल्हाद-निष्काम होकर सतोष का आनन्द लेना।

अथवा परमेश्वर हमारी तरह चर्मचक्षु न होने पर भी तीनो लोको का द्रष्टा है। चर्म श्रोत्रेन्द्रिय न होने पर भी सब सुन रहा है। चर्मनासिका न होने पर भी हमारे हृदयकमल के पवित्रभावो की सुगध ले रहा है। चर्म जिव्हा न होने पर भी हमारे हृद” मे बाल रहा है या हमें बुलवा रहा है। निष्क्रिय होकर भी सारे विश्व के पालन पोषण का भार उठा रहा है निष्काम होकर भी सब लीला कर रहा है। यथा—'पश्यत्यक्षु स शृणोत्यकर्ण.' इत्यादि।

(३) कुंजरको कीरी गिल बैठी—सूक्ष्म विवेक विचार बुद्धि से कामादि वासनाओ को जीतना। सिंघ हि पाइ अघानो श्याल—सियार जैसे अल्पप्राण जीव का भी आत्म-ज्ञान के बल पर अज्ञान को जीतना। मछरी अग्नि माहि सुख पायो—जीव का ब्रह्मज्ञान की अग्नि मे सुख पाना।

जल मे डुनी बहुत बेहाल—ससार सागर मे जीव का दुखी होना। पगु चल्यो पर्वतके ऊपर—निष्काम होकर मन को विजय करना। मृतक हि देखि डरानो काल—जीवत-मृतक (जीवन्मुक्त) होकर काल या मृत्यु को जीतना।

(४) बूद हि माहि समुद्र समानो—आत्मा मे परमात्म-भाव का भर जाना। राई माहि समानो मेर—बीज मे वृक्ष की तरह आत्मा या ब्रह्म मे सबका लीन हो जाना। पानी माहि तुम्बिका बूडी—सासारिक वासनाओ के सरोवर मे आत्मा का डूब जाना। पाहन तिरत न लागी बार—पत्थर जैसे अज्ञानी जीव का भी ज्ञान द्वारा ससार जगत को पार कर जाना। सूरज कियो सकल अघेर—ज्ञान द्वारा सासारिक भेद ज्ञान का लोप हो जाना। मूरख होई सु अर्थहि पावै—सासारिक दृष्टि से पागल होकर ही परमानन्द या परमज्ञान प्राप्त करना।

(५) मछली-विवेक बुद्धि। बगुला-दभ, पाखड। मूसा-यथार्थ ज्ञान। साप-सशय ज्ञान। सूवा-ज्ञान या ज्ञानी। बिलैया-अविद्या। बेटी-ब्रह्मविद्या। मा-माया। बेटा-आत्मज्ञान। बाप ससार या शरीर।

(६) देव-परब्रह्म, परमात्मा। देवल-विश्व या शरीर। शिष्य-मन। गुरु-आत्मा। राजा-स्वामी, आत्मा। रक-शरीर। बन्ध्या-निष्काम बुद्धि। पगुपुत्र-निश्चल तत्त्व ज्ञान। घर-देहाध्यास।

(७) कमल-हृदय, मन। पानी-भगवत्प्रेम। सूर-ब्रह्मज्ञान। शीतलता-शान्ति।

(८) हस-सत्वगुण। ब्रह्मा-रजोगुण। गरुड-रजोगुण। हरि-सत्वगुण। बैल-शरीर। शिव-आत्मा। देव-आत्मज्ञान। पाती-देहासक्ति। जरख-मन। डायन-विषयासक्ति। पानी-राग। अगीठी-सुख दुख।

(९) कपडा-शरीर। धोबी-मन। माटी-तृष्णा। कुम्हार-जीवात्मा। सूई-स्वरूप स्मृति। दरजी-जीवात्मा। सीवें-ब्रह्म से मिलावे। सोना-प्रभुस्मरण। सुनार-मन। लकरी-ध्यान। बढई-जीव। छीले-कर्मका क्षय करे। खाल-प्राणायामकी-धोकनी। लुहार-प्राणी।

(१०) घर-शरीर। मिठाई-विषयानन्द। लौन-ब्रह्मानन्द। पर्वत-अज्ञान का। पौन-पवन ज्ञान का।

(११) रजनी-प्रवृत्ति। दिवस-निवृत्ति। तेल-ब्रह्म चिन्तन। दीपक-ज्ञान। बाति-बत्ती, पचभूत। पानी-उपासना निगुरा-निर्गुण।

(१२) मेघ-भगवत्प्रेम। धार-भनकी धारा। मेरु-अहकार। नदी-सासारिक आसक्ति। बीजली-रजोगुणी तमोगुणी बुद्धि। कासा-सत्वगुण। कुटुम्ब-शुभाशुभ सस्कार।

(१३) वाडी-कर्म। माली—जीव। हाली-मन। खेत-शरीर। हस-जीवात्मा। श्यामरग-प्रभु प्रेम। भ्रमर-मन। शशिहरि-चद्रमा, मन। राहु-रजोगुण तमोगुण। सूर-ज्ञान का सूर्य। केतु-अज्ञान। सगुरा-सगुण ससार। निगुरा-निर्गुण ब्रह्म।

(१४) अग्नि-विरहाग्नि। लकरी-प्रभु प्राप्ति की लालसा। पानी-ध्यान। धीव-प्रभुदर्शन।

(१५) पात्र-शुद्ध हृदय। झोली-सात्विक विचार। योगी-जिज्ञासु। भिक्षा-ब्रह्मानुभव। जगत-ससारी जन। जागे-प्रवृत्ति मे रहे। गोरख-सतजन। सोवे-समाधि लगावे। भिक्षा-ब्रह्मानुभूति।

(१६) निर्दयी-निर्मोही। पशुघातक-इन्द्रियसयमी। दयावत-इन्द्रियासक्त। लोभी-जिज्ञासु। निर्लोभी—ईश्वर विमुख। मिथ्यावादी-जगत को मिथ्या मानने वाला। सत्य कहै-जगत को सत्य समझने वाला। धूप-आत्म ज्ञान। शीतलता-शान्ति।

(१७) माई-मोहमाया। बाप-देहाध्यास। उमदानी-उमगती हुई। धी-बुद्धि। खसम-पति, परमेश्वर। बहू विचारी-विचारशील बुद्धि। बखतावर-शिक्षक। सास-मनोवृत्ति। भाई-ब्रह्मज्ञान। कुटुम्ब-वासना, ससार।

(१८) परधन-आत्मानुभव । परनिन्दा अनात्म निवृत्ति । परधी-ईश्वरविश्वास । मास-ब्रह्मानन्द । मदिरा-आत्म चिंतन । अकर्म-निष्काम कर्म । कर्म-सकाम कर्म ।

(१९) वढई-गुरुदेव । चरखा-चित्त । वहू-ब्रह्मबुद्धि । सास-स्मृति । नैन्हू तार-सहज समाधि । पूनी-स्वानुभूति । जुलाहा-जीवात्मा । ऊची जाति-ब्रह्म से एकता ।

(२०) कुमारी कन्या-गुरुज्ञानरहित बुद्धि । घर-घर फिरे-भटकती है । वेश्या-विषयासक्त । पतिव्रता-परमात्म परायण । एक पुरुष-परमात्मा । पापी-जितेन्द्रिय । धर्म-इन्द्रियासक्ति ।

(२१) विप्र-ज्ञानी संत । रसोई-भजनभाव । चौका-शम, यम, उपरति, तितिक्षा । लकरी-ध्यानवृत्ति । चूल्हा-चित्त । रोटी-नामरटन, जप । लकरी-ध्यान । तवा-मन । खिचरी-ब्रह्मबुद्धि । हण्डिया-माया । आक धतूरा-कामक्रोधादि मनोविकार ।

(२२) बैल-कर्तृत्वाभिमानी जीव । उलटि-कर्तृत्वाभि मान छोडकर । नायक-मन बुद्धि को । लाद्यो-कर्तव्य सौंप दिया । सत्य-परमात्मा । सौदा-ब्रह्मप्राप्ति का । दिसतर-परदेश । नायकनी-बुद्धि ।

(२३) वनिक-व्यापारी, जीव। बनजी-व्यापार ईश्वर भक्ति का। तावडा-सुखदु;ख का। भली वस्तु-ईश्वर भजन, सत्कर्म। गठरिया बाधी-पुण्य की कमाई की। लेखा-जीवन का हिसाब। बरी-ब्रह्मरूपी वटवृक्ष। बैल अहकार। पूंजी-तत्त्वज्ञान की कमाई।

(२४) पहरायत-पहरेदार व्यवहार बुद्धि। शाह-जीव। चोर-वैराग्य बुद्धि या रामनाम। कोतवाल-मन। राजा-अहकार या जीव। गाव-हृदय या ससार। शोर-प्रशंसा। प्रजा-दैवीगुण या मन, प्राण, इन्द्रिय। नगरी-शरीर।

(२५) राजा-जीवात्मा। विपत्ति-सासारिक तृष्णाएं। घर घर-नाना योनि या इन्द्रिया। पाव-शुभाशुभ कर्म या सकल्प। घोडा-शरीर। बीख-मन की चाल। आक-इरड-संसार के विषय। सुख-रस। रसभरे ईख-ईश्वर भक्ति।

(२६) पानी-ईश्वर प्रेम। अग्नि-ब्रह्मज्ञान या विरह।

(२७) खसम-जीव। जोरू-विषयलालसा या ब्राह्य वृत्ति।

(२८) पथी-मुमुक्षुजीव, संत पुरुष। पंथ-ज्ञान भक्ति का मार्ग। निर्भय देश-अद्वैत ब्रह्मस्वरूप। दुष्काल-जन्म-मरण का चक्कर। सुभिक्ष-अखण्ड ब्रह्मानन्द।

(२९) अहेरी-मुमुक्षु संत। वन-ससार या शरीर। शिकार-मन पर विजय या ब्रह्मप्राप्ति। सिंह व्याघ्र मृग-

काम क्रोध लोभादि । राजा-राम, परमात्मा । धनुष-ध्यान या रामनाम । कमर-हृदय । तरकस-बाण, विचार । सावज-शिकार, मन । जुहार-निवेदन, अर्पण ।

(३०) शुक-ज्ञानी गुरुदेव । कोकिल-कोयल, विचारवान पुरुष । सारस-अविवेकी व्यक्ति । हंस-विवेकी जन । मुक्ताफल-गूढ़, सार अर्थ । मानसरोवर-हृदय । न्हाहि-प्रसन्न होते है । करक-दोष ।

(३१) द्विज-ब्राह्मण, जीव । भ्रष्टक्रिया-सांसारिक भोगविलास । ठौर-परमपद, परमानन्द ।